चन्दामामा
सितम्बर १९७३
७०
P

Photo by: **T. SURYANARAYANA**

राम और श्याम
खजाने की खोज में !
मिल गया, मिल गया... खजाने का नक्शा मिल गया !
चलो जल्दी नाव चलायें. दरिया की लहरों में जायें !
कई दिन बाद आया तूफान... नाव को किया बहुत हैरान !
नाव डूबी गोता खाकर... दोनों पहुंचे किनारे जाकर !
चलते चलते उन्होंने देखी... छोटी झोपड़ी एक अनोखी !
बच्चों ने नाना को जगाया... खजाने का नक्शा दिखलाया !
बच्चों मालामाल हो जाओ... पॉपिन्स खाओ, मौज उड़ाओ !
रसीली प्यारी मजेदार
पारले
पॉपिन्स
फलों के स्वादवाली
गोलियां
PARLE
POPPINS
५ फलों के स्वाद—
रास्पबेरी, अनानास,
नींबू, नारंगी व मोसंबी..
हर पॅकेट में १३ गोलियां

कैम्ब्रिज
छात्रों
के लिए है
नया! आश्चर्यजनक!! असाधारण!!!
स्वान कैम्ब्रिज पैन
अच्छे परिणाम के लिए स्वान डिलक्स
स्याही इस्तेमाल कीजिए

SWAN

चन्दामामा
संस्थापक : नागिरेड्डी
संचालक : 'चक्रपाणी'
इस महीने की बेताल कथा 'धनुर्विद्या का प्रदर्शन' विचारणीय है। किसी भी कार्य के लिए भी समर्थ व्यक्ति को नियुक्त करना आसान कार्य नहीं है। यह कहानी बताती है कि राजा के लिए एक अंगरक्षक की नियुक्ति करने में कैसा उपाय करना पड़ा।
"मुर्गी चोर" तथा "विचित्र भेंट" नामक कहानियों द्वारा हमें यह विदित होता है कि कुछ लोग विशेष संदर्भ में अपनी सामर्थ्य का परिचय देकर लोगों का कैसे उपकार करते हैं।
वर्ष : २६ सितंबर १९७२ अंक : ३
CP
CHITRA

याच्ञा मोघा वर मधिगुणे
ना थमे लब्ध कामा ॥ १ ॥

[अधम व्यक्ति की याचना करके अपनी इच्छा की पूर्ति करने की अपेक्षा गुनवान की याचना करके वर न पाना ही कहीं अच्छा है !"

स्वजनस्य हि दुःख मग्रतो
विवृतद्वार मि वोप जायते ॥ २ ॥

[दुखी लोगों का दुख अपने निकट बंधुओं को देखते ही उमड़ आता है ।]

विष म स्यमृतं क्वचि द्भवेत्
अमृतम् वा विष मीश्वरेच्छया ॥ ३ ॥

[ईश्वर की इच्छा के कारण अमृत एक के लिए विष बनता है तो विष दूसरे के लिए अमृत बन जाता है ।]

कस्यैं कांतम् सुख मुपनतम्
दुःख मे कांततो वा,
नीचै र्गच्छ त्युपरिचदशा
चक्रनेमि क्रमेण ॥ ४ ॥

[किसी के सुख या दुख सदा के लिए नहीं होते । मानव की दशा चक्रनेमि की भांति ऊपर और नीचे होती जाती रहती है ।]

कालिदास की सूक्तियां

मोम की बतख़

राजगढ़ का राजा देवपाल अपने दल के साथ जब शिकार से लौटा, तब उसके साथ एक अनुपम सौंदर्यवती पालकी में बैठकर राजधानी में आयी।

घने जंगल में सफ़ेद वस्त्र धारण किये एक पेड़ के नीचे बैठकर रोते हुए वह नारी राजा को दिखाई दी। राजा ने उसके निकट जाकर पूछा–"तुम कौन हो?"

"मैं एक राजकुमारी हूँ। मेरे पिता और उनके परिवार को मारकर एक राक्षसी मुझे यहाँ पर उठा लायी है।" मधुर कंठ से उस नारी ने उत्तर दिया।

राजा को उसकी हालत पर दया आयी, उसने पूछा–"तो फिर तुम क्या करना चाहती हो? तुम मानोगी तो मैं अपने साथ ले जाऊँगा। तुम्हारा विवाह न हुआ हो तो तुम्हें मैं अपनी रानी बनाने को तैयार हूँ।"

"मैं एक शर्त पर आपकी इच्छा की पूर्ति करने को तैयार हूँ। मैं जो भी करना चाहूँगी आपको आपत्ति न उठाना होगा।" नारी ने कहा।

राजा उस नारी के सौंदर्य पर मुग्ध हो गया था, इसलिए उसकी शर्त को स्वीकार करके उसी वक़्त उसके साथ विवाह किया। इसके बाद एक पालकी मंगवा कर अपनी नयी रानी को राजा राजधानी में बुलवा लाया। राजा ने अपनी नयी रानी का नाम मोहिनी रखा।

राजा देवपाल के एक रानी और पहले से ही थी। उसका नाम रूपरानी था। मगर उसे कोई संतान न थी, इसलिए राज ने एक और विवाह करने का निश्चय कर लिया था।

फिर भी रूपरानी ने बड़ी मानसिक व्यथा का अनुभव किया। उसने संतान के

ए. सी. सरकार, जादूगर

वास्ते शिवजी की प्रार्थना की। उसकी प्रार्थना सफल हुई और वह गर्भवती हुई। यह बात जानकर देवपाल रूपरानी के प्रति बड़ा प्रसन्न हुआ।

इससे मोहिनी को बड़ा क्रोध आया। रूपरानी मोहिनी को अपनी छोटी बहन की भाँति मानती थी, फिर भी मोहिनी ने रूपरानी की हानि करनी चाही।

रूपरानी के प्रसव का समय निकट आया, जिससे मोहिनी का क्रोध और भड़क उठा। वह भीतर ही भीतर कुढ़ती गयी। पर उसने अपने मन की बात प्रकट होनें न दी। रूपरानी को इस बात का बिलकुल संदेह तक न था कि मोहिनी उसका अहित करनेवाली है।

एक दिन मोहिनी ने राजा के पास जाकर बड़े ही सहानुभूति पूर्ण स्वर में कहा–"महाराज, मैं अपनी बहन का प्रसव खुद कराना चाहती हूँ। किसी को भी उस कमरे में आने न दीजिए।"

"अगर तुम्हारी यही इच्छा है तो मुझे कोई आपत्ति नहीं है। मगर हमारे दरबार की धाई है न?" राजा ने कहा।

"धाई जो सेवा कर सकती है, वह मैं भी कर सकती हूँ, आप चिंता न कीजिए।" मोहिनी ने कहा।

वास्तव में मोहिनी जंगल में रहनेवाली एक मांत्रिक है। वह अपनी मंत्र-शक्ति के बल पर एक रूपवती बन गयी थी। उसका उद्देश्य राजा और राज्य का नाश करना था। महान शिव भक्तिन रूपरानी राजमहल में थी, इसलिए मोहिनी की मंत्र-शक्तियाँ काम न दे पाती थीं। उसने किसी न किसी उपाय से राजा और रानी को अलग करना चाहा, इसलिए राजमहल के सेवकों को रिश्वत देकर रूपरानी के प्रसव के दिन एक योजना बनायी। उसने कहा था कि प्रसूति गृह में रूपरानी के साथ सिर्फ़ मोहिनी रहेगी और प्रसव के होते ही वह एक घंटी बजायेगी। ठीक समय पर रूपरानी ने

एक पुत्र का जन्म दिया। मोहिनी ने सेवकों को घूस देकर उनके हाथ उस लड़के को देकर जंगल में गाड़ देने की आज्ञा दी। बेहोशी में स्थित रूपरानी के बगल में एक मोम की बतख के खिलौने को रखकर मोहिनी ने घंटी बजायी थी।

घंटी की आवाज़ सुनकर राजा बड़ी आतुरता के साथ दौड़े-दौड़े आया, पर मोम की बतखवाले खिलौने को देख वह आश्चर्य चकित हो गया।

"महाराज, आप अपने वारिस को चूम लीजिए।" मोहिनी ने मोम की बतख को दिखाते हुए परिहास पूर्ण स्वर में कहा।

राजा देवपाल खीजकर वहाँ से चला गया। रूपरानी के प्रति उसका दिल टूट गया। दिन प्रति दिन मोहिनी राजा के मन में रूपरानी के प्रति ईर्ष्या पैदा करती गयी। आखिर राजा ने रूपरानी को मायाविनी घोषित करके उसे अपने देश से निकाल दिया।

रूपरानी एक जंगल में पहुँची। वहाँ पर एक छोटी सी झोंपड़ी बनाकर कंद, मूल-फल खाते शिवजी का ध्यान करने लगी।

एक दिन एक साधु रूपरानी के पास एक बच्चे को ले आया और उसके हाथ सौंपते हुए बोला–"बेटी, यह शिशु तुम्हारा पुत्र है! छोटी रानी मोहिनी दुष्टा है। वह एक जादूगरनी है, उसी ने तुम्हारे पुत्र को एक गड्ढे में गड़वा दिया। मैंने इसे देख तुरंत इस बच्चे को गड्ढे में से

निकाल कर बचाया। तुम अपने पुत्र का पालन करो।"

"महात्मा, मैं आपके उपकार को भूल नहीं सकती। आपका ऋण चुका नहीं सकती। क्या मेरी सहायता कर सकेंगे?" रूपरानी ने साधु से पूछा।

"बेशक, तुम्हारी सहायता करना मेरा कर्तव्य है। यही नहीं, बल्कि उस जादूगरनी का नाश करके तुम्हें और तुम्हारे पुत्र को राजमहल में पहुँचाना भी मेरा कर्तव्य है।" साधु ने उत्तर दिया।

रूपरानी जब राजमहल से दूर हो गयी, तब मोहिनी ने अपनी दुष्टता का परिचय देना शुरू किया। राजा के हाथी-खाने से हाथी और घुड़साल से घोड़े एक-एक करके गायब होने लगे। पेड़ से फल लगना और लताओं में फूलों का खिलना बंद हो गया। फसल भी बंद हो गयी। राजा दिन ब दिन कमज़ोर होता गया। अड़ोस-पड़ोस के देशों से युद्ध के खतरे उत्पन्न हो गये। राज्य में अशांति छा गयी। एक साल के पूरा होते-होते राज्य की हालत बिलकुल बिगड़ गयी।

एक दिन साधु राजधानी में आया और गुप्त रूप से मंत्री दण्डराज से मिला। दण्डराज ने आदरपूर्वक साधु का स्वागत किया और पूछा–"महात्मा, मैं आपकी क्या सेरा कर सकता हूँ?"

साधु ने मंत्री को मोहिनी की दुष्ट-चर्याओं का परिचय दिया। रूपरानी और उसके पुत्र का समाचार भी सुनाया।

इसके बाद साधु ने एक थैली में से एक मोम की बतख का खिलौना, लोहे की एक छड़ी, एक रोटी तथा एक चुंबक को निकला। लोहे की छड़ी को बतख के खिलौने की नाक में घुसेड़ दिया। उसकी नोक को इस तरह बतख की नाक में दिखाई देने लायक़ रखा, जैसे वह उसकी जीभ हो। तब चुंबक को रोटी में छिपाया। इस प्रकार तैयार किये गये

खिलौने और रोटी को मंत्री दण्डराज के हाथ देकर उसे एक गुप्त प्रयोग का परिचय दिया और विदा लेकर चला गया।

साधु की सलाह के अनुसार महामंत्री दण्डराज ने भरी सभा में राजा देवपाल से कहा—"महाराज, मैं आपको एक अद्भुत दृश्य दिखाना चाहता हूँ।"

इसके बाद मंत्री ने मेज़ पर पानी से भरी एक नांद रखवायी और उसके पानी पर मोम की बतख को रखा।

"महाराज, देखिये। यह एक रोटी खाने आगे बढ़ेगी।" मंत्री दण्डराज ने कहा।

"यह बेकार की बात है। कहीं बतख की गुड़िया जानदार बतख के जैसे कर सकती है?" राजा ने पूछा।

"अगर मनुष्य के गर्भ में से बतख की गुड़िया पैदा हो सकती है तो जानदार बतख के जैसे क्यों नहीं कर सकती? लेकिन यह बात सच है कि ये दोनों जादू के प्रभाव से कर सकनेवाले काम हैं।" महामंत्री ने कहा।

यों कहते मंत्री अपने हाथ की रोटी को बतख की नाक के पास ले गया। जिस ओर तेज़ी के साथ रोटी को ले जाया जाता था, बतख उसी ओर घूमने लग गयी थी।

उसी समय साधु रूपरानी तथा उसके पुत्र को साथ ले दरबार में पहुँचा। उन्हें देखते ही राजा चौंक उठा। साधु राजा के सामने आ खड़ा हुआ और उसने अपनी नक़ली दाढ़ी उतार कर फेंक दी।

राजा ने उस ब्राह्मण को देखते ही पूछा–"गुरुदेव, आप हैं! क्षमा कीजियेगा, मैं आपको पहचान नहीं पाया।" यों कहते राजा ने अपने गुरु के चरणों में प्रमाण किया।

"राजन्, तुम और अनेक बातों को पहचान न पाये। यह भी तुमने नहीं जाना कि तुम्हारी दूसरी रानी जादूगरनी है। यह नहीं जाना कि रूपरानी तुम्हारी भाग्यदेवी है। यह भी समझ न पाये कि तुम्हारी रानी के गर्भ से बतख की गुडिया पैदा हो गयी है, तो इसमें धोखा होगा। मोहिनी के सौंदर्य ने तुम्हें अंधा बना दिया। मैं सच्चाई का परिचय कराता हूँ, देखो।" यों कहते राजगुरु ने कमण्डलु से थोड़े जल निकाल कर मोहिनी पर छिड़क दिये।

तुरंत मोहिनी एक कुबडी के रूप में बदल गयी। वह कौए के रंग का हो गयी। राजगुरु ने जब दूसरी बार पानी छिड़का दिया तब वह कुबडी मुट्ठी भर राख बन गयी।

"गुरुदेव! हमारा उद्धार हो गया!" राज दरबारी एक साथ हर्षनाद कर उठे। राजा अपने दोनों हाथ बांधे मौन खड़ा रह गया।

राजगुरु ने यों कहा–"जिस दिन तुम मोहिनी को राजमहल में लाये, उसी दिन मैंने उसका समाचार जान गया। फिर भी मैंने इसलिए तुम्हें चेतावनी न दी कि तुम उसके मोह में पड़े हुए हो, इसलिए मेरी बात न मानोगे! इसलिए मैंने जंगल में जाकर शिवजी का ध्यान किया और जादूगरनी पर मारण होम करने के हेतु मैंने यह मंत्र-जल प्राप्त किया। साथ ही मैं तुम्हारे पुत्र के प्राणों को भी बचा पाया।"

राजा ने आतुरता पूर्ण स्वर में पूछा–"राजकुमार कहाँ?"

"देखो, उसकी माँ की गोद में है।" यों कहते दूर खड़ी अपने पुत्र को गोद में लिये हुए रूपरानी की ओर राजगुरु ने संकेत किया।

[१५]

[गुरु भल्लूक सुरंग मार्ग के ऊपर में स्थित द्वार के पास आ पहुँचा। खड्गवर्मा तथा जीवदत्त ने मृत भेड़िये को द्वार के भीतर फेंक दिया। इसे देख कुछ भेड़िये सुरंग में कूद पड़े। उनके पीछे खड्गवर्मा और जीवदत्त द्वार पर चढ़ आये। नीचे खड़े समरबाहू तथा उसके अनुचर को भेड़ियों ने घेर लिया। बाद—]

समरबाहू यह सोचते चारों तरफ़ देख रहा था कि वहाँ से भाग जाने के लिए सुरंग के दुर्ग से न होकर कोई दूसरा रास्ता तो नहीं है। तभी उसका अनुचर उछल कर कूद पड़ा और बोला–"मालिक, भेड़िये हम पर हमला कर रहे हैं। हम मर जायेंगे। बचने का हमें कोई उपाय सोचना चाहिए। हम भी सुरंग के द्वार पर चढ़ जाय तो क्या होगा?"

समरबाहू पर हमला करनेवाले भेड़ियों को देखते ही जीवदत्त सुरंग मार्ग से नीचे कूद पड़ा और अपने दण्ड का प्रयोग करके भेड़ियों को तितर-बितर करके बोला–"समरबाहू! चाहे कुछ भी हो जाय, हमें सुरंग के दुर्ग में घुसकर दुश्मन को भगा कर यहाँ से खिसक जाना होगा, इसके सिवा कोई दूसरा मार्ग नहीं है। तुम दोनों जल्दी सुरंग के द्वार तक चढ़

जाओ। देरी मत करो। भेड़ियों से बच आओ।"

इस बीच खड्गवर्मा ने द्वार के पीछे से आगे झुककर अपने दोनों हाथ बढ़ाये और कहा–"समरबाहू, चन्दू! तुम दोनों जल्दी मेरे हाथों का सहारा लेकर ऊपर चढ़ जाओ।"

समरबाहू और उसका अनुचर दौड़ पड़े और खड्गवर्मा की सूचना के अनुसार उछल कर उसके हाथ पकड़ लिये, तब खड्गवर्मा ने उन्हें ऊपर खींच लिया। जीवदत्त ने थोड़ी देर तक अपने दण्ड से भेड़ियों को हाँक दिया और उछल कर वह भी सुरंग के द्वार तक जा पहुँचा।

अब चारों ने सुरंग की ओर ध्यान से देखा। धुंधली अंधियारी में एक सुरंग के पास पड़ा मृत भेड़िया उन्हें दिखायी दिया। उसे खड्गवर्मा ने ही वहाँ पर फेंक दिया था।

"जीवदत्त! अब मुझे लगता है कि हमारी चाल चल निकली है। इस मरे हुए भेड़िये को नोच-नोच कर खाने के लिए यहाँ पर चार-पाँच भेड़िये जमा हो गये थे, वे सब कहाँ? भल्लूक दल के लोगों का बिलकुल पता नहीं लग रहा है! क्या वे लोग सुरंग के दुर्ग में ही रह गये? या जंगल की ओर भाग गये?" खड्गवर्मा ने पूछा।

जीवदत्त ने तत्काल कोई उत्तर न दिया, थोड़ी देर तक कान लगाये देखता रहा कि कहीं कोई ध्वनियाँ सुनायी दें, फिर बोला–"खड्गवर्मा, इस सुरंग के दुर्ग में कहीं कोई हलचल हो रही है। उसकी अस्पष्ट ध्वनि मुझे सुनायी दे रही है। क्या तुम्हें सुनायी नहीं देती? सब दो-चार क्षण मौन रहकर सावधानी से सुन लो। इसके बाद हम आगे की बात सोच लेंगे।"

दो-तीन क्षण मौन बीत गये। तब चन्दू बोला–"हुजूर! सुरंग में कहीं भेड़ियों के चिल्लाने की आवाज़ मुझे सुनायी दे रही है।"

समरबाहू ने आँखें विस्फारित करके सिर हिलाते हुए कहा–" मुझे भेड़ियों की आवाज़ ही नहीं बल्कि गुरु भल्लूक की चेतावनी भी सुनायी दे रही है। हमारा यहाँ पर और रहना खतरे से खाली नहीं है। उनके द्वारा हम पर हमला होने के पूर्व ही यहाँ से भाग जाना उचित होगा।"

"तुम किसी साम्राज्य की स्थापना करने का सपना देख रहे हो? ऐसी हालत में प्राणों पर ऐसा मोह ठीक नहीं है।" खड्गवर्मा ने डाँटनेवाले स्वर में कहा।

समरबाहू में शायद उत्साह उमड़ आया था, उसने भाले को चमकाते कहा–" प्राण खो बैठे तो राज्यों को जीतकर साम्राज्य कैसे स्थापित कर सकता हूँ? इसीलिए मेरी इच्छा के पूर्ण होने तक मैं मरना नहीं चाहता। मैं ज़िंदा रहने की हर तरह से कोशिश करूँगा।"

समरबाहू की बातों पर खड्गवर्मा ने ज़ोर से हंसना चाहा, मगर जीवदत्त की क्रोधभरी दृष्टि को देख मंदहास करके मौन रह गया। इसके बाद जीवदत्त सुरंग के मार्ग से आगे बढ़ते बोला–" देखते हो न समरबाहू! यह मंत्र दण्ड और खड्गवर्मा की तलवार। ये तुम्हें सुरक्षित हमारे मित्र स्वर्णाचारी के पास पहुँचा देंगे। यह सोचकर यह मत भूलो कि अपनी आत्मरक्षा के लिए तुम अपने हाथ के भाले का उपयोग किये बिना रह जाओ। तुम्हें भी अपनी तरह पूरा प्रयत्न करना होगा।"

तब वे चारों सुरंग के मार्ग से मौन आगे बढ़े। ज्यों ज्यों वे आगे बढ़ते, त्यों त्यों उन्हें भेड़ियों की आवाज़ और मनुष्यों की चिल्लाहटें स्पष्ट सुनायी देने लगीं। खड्गवर्मा और जीवदत्त को इस बात का आश्चर्य हुआ कि चार-पांच भेड़िये सुरंग में घुसकर भल्लूक जाति के दल को कैसे भगा पाये।

थोड़ी ही देर में वे लोग सुरंग मार्ग में भल्लूक जाति के निवास पर पहुँचे। जीवदत्त को इस बात का संदेह हुआ कि गुरु भल्लूक वृकेश्वरी देवी की लकड़ी की मूर्तिवाले कमरे में जरूर होगा!

"खड्गवर्मा, ऐसा लगता है कि भल्लूक जाति का सारा दल जंगल में भाग नहीं गया है। अगर वे भाग गये होते तो भेड़िये यहाँ पर चिल्लाते न होते! मैं समझता हूँ कि उनकी नज़र में पड़ने पर हम यहाँ से बाहर नहीं निकल सकते।" जीवदत्त ने कहा।

जीवदत्त की बातें पूरी न हो पायी थीं तभी भल्लूक जाति का एक व्यक्ति घबराये चिल्लाते उस ओर आया। उसके पीछे एक भेड़िया दहाड़े मारते बढ़ा आ रहा था। खड्वर्मा ने एक क़दम आगे बढ़कर तलवार से भेड़िये पर वार किया। चोट खाकर भेड़िया गिर पड़ा, भीकर ध्वनि करते पीछे मुड़कर गिरते-उठते बेतहाशा भाग गया।

भल्लूक जाति का सेवक भेड़िये के डर से भाग आया था, पर सामने खड्गवर्मा और जीवदत्त को निश्चल खड़े देख भय के मारे आपाद मस्तक कांप उठा। जीवदत्त ने उसके निकट जाकर कहा-"अरे गुरु भल्लूक के शिष्य! तुम ऐन वक़्त पर यहाँ आ गये हो। शायद यह सब वृकेश्वरी देवी की महिमा होगी! तुम ज़ोर से मत बोलो, सिर्फ़ हमारे सवालों का जवाब देते जाओ, समझें।"

"झूठ बोला तो तुम्हारा सिर काट दूंगा, समझे!" यों कहते खड्गवर्मा ने तलवार उठाकर उसके कंठ का निशाना बनाया।

"अब बताओ, तुम्हारा नेता गुरु भल्लूक इस वक़्त कहाँ पर है?तुम्हारे दल के लोग अभी तक इस सुरंग में ही हैं या सुरंग को छोड़ जंगल में भाग गये हैं? जल्दी बताओ और सच बताओ, वरना..." जीवदत्त ने पूछा।

"साहब! हमारे दल के लोगों में से कोई भी इस सुरंग को छोड़ बाहर नहीं गया है। भेड़ियों से डरकर सब लोग इस प्रदेश की झोंपड़ियों और कमरों में शायद छिप गये हैं। गुरु भल्लूक वृकेश्वरी देवी के कमरे में पूजा कर रहे हैं।" भल्लूक जाति के सेवक ने कहा।

"अरे, तुम लोग मानवों को पकड़ कर गुलाम बनाते हो और उन लोगों से बेगारी लेनेवाले महान वीर हो न? फिर भेड़ियों से डरकर भागते क्यों हो?" खड्गवर्मा ने पूछा।

"मनुष्यों की क्या बात है, साहब? बलवानों के सामने सिर झुका देते हैं, मगर भेड़ियों की बात तो ऐसी नहीं है! ये तो खूंख्वार जानवर ठहरे!" भल्लूक जाति के सेवक ने कहा।

उसकी बातों पर जीवदत्त ने हंसकर कहा—"तुमने कायरता के तत्व को भी बड़े ही सुंदर ढंग से बताया है। यह बात सच है न कि गुरु भल्लूक लकड़ी की मूर्ति वाली वृकेश्वरी के कमरे में है? अगर यह बात झूठ निकली तो समझो, तुम्हारी मौत निश्चित है!"

"इसमें बिलकुल झूठ की बात नहीं है, साहब! चाहे तो आप लोग जाकर देख लीजिए!" जीवदत्त के सामने झुककर सलाम करते भल्लूक जाति के सेवक ने बताया।

"इसमें कहां तक सचाई है, अभी पता लग जाएगा। तुम आगे रहकर रास्ता

दिखाओ! तुम धोखा देने की कोशिश करोगे तो तुम्हारा सिर काट दूंगा।" जीवदत्त ने धमकी दी।

इसके बाद गुरु भल्लूक का शिष्य खड्गवर्मा और जीवदत्त को साथ ले थोड़ी दूर चला। सामनेवाले एक कमरे की ओर उंगली दिखाते बोला-"साहब, वही है वृकेश्वरी देवी का मंदिर! देखिये, गुरु भल्लूक अन्दर हैं।"

खड्गवर्मा ने चुप-चाप जाकर धीरे से किवाड़ को ढकेल कर देखा। दर्वाज़ों में भीतर कुंडी न लगी थी, इसलिए किवाड़ थोड़ा सा खुल गया। भीतर वृकेश्वरी की मूर्ति के सामने साष्टांग लेटे गुरु भल्लूक भक्तिपूर्वक उच्च स्वर में कुछ गुन-गुना रहा है।

खड्गवर्मा ने संकेत के द्वारा जीवदत्त को निकट बुलाया, उसे गुरु भल्लूक को दिखाकर पुनः किवाड़ बंद किया। तब जीवदत्त को थोड़ी दूर ले जाकर पूछा- "क्या यहीं पर गुरु भल्लूक का वध कर बैठेंगे?"

जीवदत्त दो-चार पल सोचते मौन रहा, तब सिर हिलाते बोला-"खड्गवर्मा, इस गुरु भल्लूक का वध करके हम कुछ पानेवाले नहीं हैं। इसके साथ इसके कुछ शिष्यों का वध करके नाहक़ खूनखराबी क्यों करें! वह मूर्ति के सामने साष्टांग लेटा पड़ा है, इसलिए तुम मूर्ति के पीछे चले जाओ। वृकेश्वरी देवी की वाणी जैसा अभिनय करके गुरु भल्लूक और उसके सारे शिष्यों को इस सुरंग के दुर्ग से भाग जाने की चेतावनी दो।"

"यूं ही भाग जाने को कहे तो क्या वह भाग जायगा? तुम्हारे शब्दों के साथ मैं अपनी तरफ़ से भी थोड़ा और मसाला जोड़कर कहूँगा। अगर वह यह जानकर कि वृकेश्वरी देवी नहीं बोल रही है और मुझ पर हमला करने का प्रयत्न करेगा तो मैं इस तलवार से उसके दो टुकड़े कर दूंगा।"

"तुम जो चाहो, सो जल्दी करो। वह अपनी पूजा समाप्त कर उठ खड़ा हो गया तो फिर हमारी चाल न चलेगी!" जीवदत्त ने सुझाया।

खड्गवर्मा बिल्ली की भाँति कमरे में पहुँच गया। वृकेश्वरी मूर्ति के पीछे बैठकर उच्च स्वर में बोला—"गुरु भल्लूक! मैं तुम्हारी भक्ति पर प्रसन्न हूँ। देवताओं के द्रोही इस सुरंग दुर्ग में पहुँच गये हैं, इसलिए यह दुर्ग अपवित्र हो गया है। मैं अभी यहाँ से अंतर्धान होकर यहाँ से पूर्वी दिशा में आधे कोस की दूरी पर स्थित जंगल के तालाब के किनारेवाले शमी वृक्ष के नीचे प्रत्यक्ष होनेवाली हूँ। तुम अपने शिष्यों के साथ वहाँ पर आ जाओ, स्नान करके तब मेरी पूजा करो।"

ये बातें सुनते ही गुरु भल्लूक चौंककर उठ खड़ा हुआ। उसने मूर्ति की ओर भक्ति भाव से हाथ जोड़कर एक-दो पल ध्यान किया, तब कहा—"देवी!" इसके बाद वह कुछ और कहने को था, तभी खड्गवर्मा खीझते स्वर में बोला—"अरे, बोलो मत! तुम अपने शिष्यों के साथ जंगल के तालाब के किनारे शीघ्र आ जाओ। देरी न करो।"

गुरु भल्लूक ने स्वयं चपत लगवाये! मूर्ति के सामने साष्टांग दण्डवत करके उठ खड़ा हुआ और कमरे से बाहर चला आया। उसके बाहर आते देख जीवदत्त

और उसके साथ रहनेवाले लोग दूर जाकर दीवार के पीछे छिप गये।

गुरु भल्लूक के मन में इस बात की वजह से हिम्मत आ गयी कि वृकेश्वरीदेवी ने स्वयं उससे बात की है। वह अपने पंच शूल को ऊपर उठाये सारे दुर्ग में चिल्लाते घूमने लगा–"अरे, वृकेश्वरीदेवी के भक्तो, तुम सब जल्दी रवाना होकर जंगल के तालाब के पास आ जाओ। देवी की आज्ञा है।"

भेड़ियों से डरकर इधर-उधर छिपे गुरु भल्लूक के सभी शिष्य आध घड़ी के अन्दर दल बांधकर सुरंग से बाहर चले गये। भेड़िये दुर्ग में यत्र-तत्र घूमते चिल्ला रहे थे।

गुरु भल्लूक भी सुरंग दुर्ग से बाहर आया। एक बार और वृकेश्वरी देवी की आज्ञा को अपने शिष्यों को सुनाया, तब सबके साथ जंगल की ओर चल पड़ा। लेकिन थोड़ी दूर जाने के बाद उसे इस बात का संदेह हुआ कि वृकेश्वरी देवी अब तक सुरंग दुर्ग के अपने मंदिर में है या गायब हो गयी है। उस अंधी भक्ति में उसे इस बात का ख्याल न था कि उसके शत्रु खड्गवर्मा, जीवदत्त और समरबाहू उस सुरंग के दुर्ग में हो सकते हैं! उनके द्वारा खतरा पैदा हो सकता है।

गुरु भल्लूक जब सुरंग के निकट आ रहा था, तब खड्गवर्मा और जीवदत्त भीतर भेड़ियों को ढूंढ़-ढूंढ़ कर उन्हें भगा रहे थे। एक भेड़िये ने उनका सामना किया तो उन लोगों ने उसे मार डाला। बाक़ी चार भेड़िये सुरंग में से बाहर निकल कर भागने लगे। उन्हें ठीक वक़्त पर सुरंग के ऊपर गुरु भल्लूक दिखायी दिया। फिर क्या था, वे सब गर्जन करते गुरु भल्लूक की ओर टूट पड़े।

गुरु भल्लूक उन भेड़ियों को देख एकदम कांप उठा, फिर पीछे मुड़कर अपने शिष्यों की ओर भागते चिल्लाने लगा– "वृकेश्वरी माता, मुझे बचाओ।"

(और है)

धनुर्विद्या का प्रदर्शन

हठी विक्रमार्क पेड़ के पास लौट आया। पेड़ से शव उतार कर कंधे पर डाल सदा की भाँति चुपचाप श्मशान की ओर चलने लगा, तब शव में स्थित बेताल ने कहा–"राजन, तुम जो श्रम उठाते हो, यही उठानेवाले दूसरे आदमी को ढूँढना में असंभव मानता हूँ। प्राचीन काल में महाराजा चतुरसेन को अपने लिए एक नये अंगरक्षक की नियुक्ति करना इसी प्रकार कठिन साध्य हो गया था। श्रम को भुलाने के लिए मैं वह कहानी सुनाता हूँ। सुनो।"

बेताल यों कहने लगा: बात उस समय की है जब महाराजा चतुरसेन चतुरंगपुर पर शासन करता था। उसके आनंद नामक एक अंगरक्षक था। उसने अनेक बार राजा को अनेक प्रकार के खतरों से बचाया था। उसके रहते राजा पर मक्खी तक बैठने का साहस न करती

बेताल कथाएँ

थी। एक बार आनंद अचानक बीमार हो गया और उसके हाथ को लकवा मार गया। राज वैद्यों ने अनेक इलाज किये, पर कोई लाभ न हुआ। लगा कि ज़िंदगी भर आनंद को लूला ही बनकर रहना होगा।

यह हालत देख आनंद ने राजा से कहा–"महाराज, जब तक मैं आपके साथ रहा, आपको अपने बारे में सोचने की कोई आवश्यकता न रही। इस वक़्त मुझे तो अपनी चिंता नहीं है, पर मेरी चिंता यही है कि आपको एक और समर्थ अंगरक्षक कैसे प्राप्त होगा!"

चतुरसेन आनंद की राजभक्ति से भली भाँति परिचित था। देश की राजनैतिक दशा भी कुछ अच्छी न थी। इसलिए राजा के लिए आनंद जैसे समर्थ अंगरक्षक की नितांत आवश्यकता थी।

"इस समस्या को लेकर चिंता करने से क्या फ़ायदा? मेरे लिए नये अंगरक्षक की नियुक्ति करने की जिम्मेदारी सेनापति और मंत्री की है।" राजा ने कहा।

"ऐसी बात नहीं है, महाराज! मेरे मन में एक विचार आया है। यदि आपको पसंद आवे तो मेरे कहे अनुसार कीजिए। आपने सुधन्वु का नाम सुना होगा। हमारे राज्य में उससे बढ़कर धनुर्धारी दूसरा नहीं है। वे हमारे दूर के रिश्तेदार भी हैं। एक बार आप उनके द्वारा धनुर्विद्या के प्रदर्शन का प्रबंध कीजिए। यदि मैं स्वयं उनसे निवेदन करूँ तो वे स्वीकार करके हमारी सहायता कर सकते हैं।" आनंद ने अपने विचार बताये।

इसके बाद सुधन्वु के पास खबर भेजी गयी कि वह राजधानी में आकर राजा से भेंट करे। आनंद ने भी अलग से उसके पास समाचार भेजा। सुधन्वु के आने पर राजा ने उससे धनुर्विद्या का प्रदर्शन करने का आदेश दिया।

"महाराज, मेरी उम्र बढ़ती जा रही है। आज मैं जो प्रदर्शन करने जा रहा हूँ, वह शायद किसी को उतना

आकर्षक न होगा।" सुधन्वु ने जवाब दिया।

फिर भी राजा के अनुरोध पर सुधन्वु ने अपनी विद्या का प्रदर्शन करने को मान लिया। प्रदर्शन के सारे प्रबंध किये गये।

उस धनुर्विद्या के प्रदर्शन को देखने आये हुए लोगों को संबोधित कर सुधन्वु ने कहा—"कोई भी साहसी अपने मस्तक पर एक फल रखकर खड़े हो जाय तो मैं सौ गज की दूर से उस फल को बाण से गिरा दूंगा। जो लोग फल को सिर पर रखने की हिम्मत रखते हैं, वे आगे आये।"

सुधन्वु की कीर्ति से सभी लोग परिचित थे, इसलिए दस-बारह युवक आगे आये।

सुधन्वु ने उन युवकों से कहा—"मैंने जान लिया कि तुम लोगों का मुझ पर विश्वास है। मगर तुम में से किसी ने भी मेरी विद्या को देखा न होगा। बहुत समय पूर्व अर्जित मेरी कीर्ति को सुना होगा। मैं नहीं जानता कि फिलहाल मेरा निशाना कैसा है? इसलिए पहले एक-दो बाणों का प्रयोग करके फिर असली प्रदर्शन करूंगा।"

सुधन्वु की इच्छा पर राजा ने एक थाल मंगवाया और उसमें एक चांदी की डिबिया और एक सोने की डिबिया ढक्कनों के साथ रखवा दिया।

सुधन्वु धनुष और बाण ले दूर खड़े हो बोला—"मैं चांदी की डिबिया के ढक्कन को गिराने का प्रयत्न करूंगा।" दूसरे ही क्षण बाण का निशाना लगाकर छोड़ दिया, पर सोने की डिबिया पर का ढक्कन उड़ गया; सुधन्वु का चेहरा विकल हो उठा, प्रेक्षक सुधन्वु की हार पर चकित रह गये।

इसके बाद सुधन्वु ने एक और प्रयत्न किया। उसने दो हंडियाँ मंगवायीं। एक में गुलाब जल और दूसरी में पानी भरवा दिया। तब दो बाण हाथ में लेकर दूर जा खड़ा हुआ और बोला—"इस वक़्त मैं एक बाण से गुलाब जलवाली हंडी में

छेद बनाकर दूसरे बाण से उस छेद को भर दूंगा।"

सुधन्वु ने जो पहला बाण छोड़ा, उसने गुलाब जलवाली हंडी में नहीं, बल्कि पानीवाली हंडी में छेद बनाया। दूसरे बाण ने उस छेद को भर दिया जिससे पानी का छूना बंद हो गया।

तब सुधन्वु ने युवकों से कहा-"तुम लोग देखते हो न, मेरा मन कुछ अशांत है। मेरा निशाना भी ठीक नही है। इसलिए सोचकर बताओ, तुममें से कौन अपने मस्तक पर फल रखकर मेरी धनुर्विद्या के प्रदर्शन में भाग लेना चाहते हो? वह आगे आ जावे।"

इस पर सिर्फ़ एक युवक आगे आया। उसने कहा-"मैं तैयार हूँ।"

महाराजा के निकट रहकर ये सारे दृश्य देखनेवाला आनंद गुप्त रूप से बोला- "महाराज, यही आपका अंगरक्षक होने जा रहा है।"

युवक फिर पीछे गया, अपने सिर पर फल रखकर खड़ा हो गया। सुधन्वु ने धनुष पर बाण चढ़ाया। तिस पर भी युवक के चेहरे पर भय की रेखाएँ नहीं खिचीं। प्रेक्षक भयभीत हो ताक रहे थे। सुधन्वु तथा उस युवक के बीच एक सौ गजों की दूरी थी।

फिर भी सुधन्वु ने कान तक खींचकर बाण को छोड़ दिया जो युवक के सिर पर के फल को उड़ा ले गया। युवक जरा भी विचलित नहीं हुआ। महाराज ने उस युवक का अभिनंदन किया और उसे अपना अंगरक्षक नियुक्त किया।

बेताल ने यह कहानी सुनाकर कहा- "राजन, मेरे मन में कुछ संदेह हैं। राजा के लिए एक अंगरक्षक की जरूरत थी, पर आनंद ने धनुर्विद्या का प्रदर्शन क्यों कराया? इसके लिए राजा ने क्यों सम्मति दी? सुधन्वु ने जब जान लिया कि उसका निशाना ठीक नहीं है, तब उसने प्रदर्शन में भाग लेने से इनकार न

करके उस युवक के प्रणों को संकट में डालने का क्यों निश्चय किया? जब सब युवक होशियारी से पीछे हट गये, तब एक युवक हठ पूर्वक क्यों आगे आया? आनंद ने राजा को क्यों सलाह दी कि उसे अपना अंग रक्षक नियुक्त कर सकते हैं? इन संदेहों का समाधान जानते हुए भी न दोगे तो तुम्हारा सिर टुकड़े-टुकड़े हो जायगा।"

इस पर किक्रमार्क ने यों उत्तर दिया– "राजा को अंगरक्षक को नियुक्त करने की जितनी चिंता न थी, उतनी अधिक आनंद को थी। इसके लिए आनंद ने धनुर्विद्या का प्रदर्शन कराने की सलाह दी जिसे राजा ने उपयुक्त माना। क्योंकि राजा का आनंद के प्रति पूर्ण विश्वास था। सुधन्वु का यह अभिनय करना कि उसका निशाना ठीक नहीं बैठता है, यह अंगरक्षक की परीक्षा का एक उपाय मात्र है। बड़े निशानेबाजी का ही निशान अचूक होता है। अलावा इसके प्रसिद्ध धनुर्धारी बिना पूर्ण आत्मविश्वास के धनुर्विद्या का प्रदर्शन नहीं करता, क्योंकि इसके द्वारा दूसरों के प्राणों के लिए खतरा उपस्थित हो सकता है। सुधन्वु के मन में यह विश्वास था कि वह सफलतापूर्वक धनुर्विद्या का प्रदर्शन दे सकता है। इसीलिए वह घर नहीं लौटा। वास्तविक साहस और विवेक न रखनेवाले युवकों को सुधन्वु ने घबरा दिया और वे भी डर गये। जो घबराया न था, वह साहस के साथ विवेक भी रखनेवाला है। उसने जान लिया कि सुधन्वु का निशान सही है। इसीलिए वह आगे आया। उसका साहस हठ से पूर्ण नहीं है। आनंद का प्रारंभ से ही यही विश्वास था कि ऐसा व्यक्ति ही अंग रक्षक के पद के लिए उपयुक्त होगा। इसलिए उसी व्यक्ति को राजा ने अपना अंगरक्षक नियुक्त किया।"

राजा के इस प्रकार मौन भंग होते ही बेताल शव के साथ गायब हो पेड़ पर जा बैठा। (कल्पित)

झूठा साधु

प्राचीन काल की बात है। एक झूठा साधु अपने शिष्यों के साथ एक नगर में आया और इस बात का प्रचार करने लगा–"मरकर नरक की यातनाएँ भोगनेवालों को स्वर्ग में भिजवा दूँगा।"

भोले लोगों ने साधु की बातों पर विश्वास किया, उसे खूब धन देकर अपने पुरखों को स्वर्ग में भेजने का अनुष्ठान करने की प्रार्थना की। यह बात उस नगर के राजा के कानों में पड़ी। वह अपनी प्रजा के भोलेपन पर दुखी हुआ और उनमें ज्ञानोदय कराने के ख्याल से अपने सिपाहियों को भेजकर झूठे साधु को कारागर में रखवाया।

यह ख़बर मिलते ही झूठे साधु के कुछ भक्त राजा के पास गये और निवेदन करने लगे–"महाराज, उस महात्मा को क़ैद में रखना भारी भूल है। उन्हें शीघ्र कारागार से मुक्त कर दीजिए।"

"मरे हुए लोगों को नरक से मुक्त करके स्वर्ग में भेजने की शक्ति रखनेवाले क्या जेल के सीखचों से बाहर नहीं आ सकते?" राजा ने उन लोगों से पूछा।

फिर क्या था, उस दिन से झूठे साधु के प्रति जनता का विश्वास जाता रहा।

निजी सपना

एक दंपति मेले में गये, नदी में उतर कर स्नान करते मगर-मच्छ के शिकार हुए। रामेश्वर नामक उनके एक लड़का था, जो पांच साल का था। वह अनाथ बनकर रोते हुए भीड़ के बीच घूम रहा था, तब अयोध्यानंदन नामक मवेशी ने उसे देखा, सारी बातें जानकर उसे सांत्वना दी और अपने घर लाकर पालने लगा।

रामेश्वर तेज लड़का था। वह सभी कामों में अयोध्यानंदन का हाथ बटाता था। बचपन से ही उसका कंठ बड़ा ही मधुर था। वह गीत गाता तो सभी गाय-भैंस अपने सिर उठाये मौन रह जाते। रामेश्वर की एक और विशेषता थी कि वह जो भी सपना देखता, वह सच निकलता था।

एक दिन रामेश्वर ने अयोध्यानंदन से कहा—"रात को मैंने एक सपना देखा है। आप पहाड़ की तलहटी में एक पेड़ के नीचे बैठे हुए थे, तब एक काली चिड़िया आ पहुँची, उसने अपनी चोंच ज़मीन पर दे मारी। आपने उस जगह खोदकर देखा, आपको वहाँ अशर्फ़ियों का घड़ा मिल गया है।"

अयोध्यानंदन ने इस सपने पर कोई ध्यान न दिया, लेकिन एक सप्ताह बाद रामेश्वर का सपना सच निकला। अयोध्यानंदन को अशर्फ़ियों का घड़ा मिल ही गया।

इसी प्रकार दो-तीन बार रामेश्वर ने सपने देखे और वे सच निकले, इसलिए अयोध्यानंदन रोज़ सबेरे रामेश्वर के सपनों के बारे में पूछा करता था। एक दिन सबेरे रामेश्वर ने नींद से जागते ही कहा—"वाह, बहुत बढ़िया सपना है।"

"अरे, वह कैसा सपना है?" अयोध्यानंदन ने पूछा।

विमला गार्गव

"यह तो मेरा निजी सपना है!" रामेश्वर ने उत्तर दिया। अयोध्यानंदन ने मिन्नत की, फिर भी रामेश्वर ने अपने सपने की बात नहीं बतायी, अयोध्यानंदन ने क्रोध में आकर रामेश्वर को अपने घर से भगा दिया।

रामेश्वर वहाँ से उत्तरी दिशा की ओर बढ़ा, दो-तीन गाँवों को पार कर एक तालाब के पास आया। उस तालाब की मेंड पर झबरी मूँछोंवाला एक आदमी खड़े हो कुछ सोच रहा था। रामेश्वर ने उस व्यक्ति को प्रणाम करके कहा–"महाशय, मैं अनाथ हूँ। मझे काम दीजिए। सिर्फ़ खाना-कपड़ा दीजिए। मैं खेतीबारी के सारे काम जानता हूँ।"

उस आदमी ने रामेश्वर से कहा–"कहीं किसी को खेत जोतते देख उसकी आँख बचाकर उसके बैलों को चुरा लाओगे तो तुम्हें मैं काम दूँगा।"

रामेश्वर ने मान लिया। वह उसी वक़्त चल पड़ा। उसने देखा कि जंगल के समीप एक आदमी अकेले खेत जोत रहा है। रामेश्वर जंगल में गया, एक पेड़ के पीछे छिपकर मधुर कंठ से गाने लगा। गीत को सुन बैल और किसान भी अपने काम को छोड़ उसी ओर देखने लगे।

किसान उस गायक को देखने के ख्याल से बैलों को खेत में ही छोड़ जंगल में घुस पड़ा। रामेश्वर किसान की आँख बचाते झाड़ियों की ओर बहुत दूर तक गाता चला गया। वहाँ पर गीत गाना बंद करके गुप्त रूप से वह खेत में लौट आया। बैलों को हांक ले गया। किसान ने गायक को बड़ी देर तक ढूंढा, आखिर थककर अपने खेत को लौट आया, पर उसे कहीं बैल दिखायी नहीं दिये।

रामेश्वर को जिस आदमी ने बैल चुराने को कहा था, वह यों तो किसान ही था, पर बैलों का व्यापार भी चोरी से करता था। उसने रामेश्वर को काम दिया।

कुछ दिन बीत गये। बैलों की चोरी करके व्यापार करनेवाले के पास बैल खरीदने के विचार से अयोध्यानंदन आया। उसने रामेश्वर को पहचाना और पूछा–"अरे रामेश्वर, तुम यहाँ पर हो?"

"क्या तुम इसको जानते हो?" झबरी मूँछोंवाले व्यापारी ने पूछा।

"यह तो मेरे ही घर पला है। यह विचित्र सपने देखा करता था जो बिलकुल सच निकलते थे। आखिर इसने एक सपना देखा, पर इसने मुझे बताया नहीं। इसके सपनों की वजह से मुझे बड़ा फ़ायदा हुआ है। आपको भी काफ़ी लाभ हुआ होगा?" अयोध्यानंदन ने पूछा।

झबरी मूँछोंवाले ने कहा–"नहीं तो?" इसके बाद उसने रामेश्वर से पूछा–"अरे, तुमने मेरे घर रहते क्या क्या सपने देखे?"

रामेश्वर ने बताया कि उसने एक भी सपना नहीं देखा।

"अरे, नमकहराम! मेरे घर खाकर मेरे घर सपने देखकर मुझसे बताये बिना सारा लाभ तुम्हीं छिपा रहे हो?" यों डांटते हुए झबरी मूँछोंवाला रामेश्वर को मारने दौड़ा, लेकिन रामेश्वर बचकर भाग निकला और दूसरे गाँव जा पहुँचा।

एक जगह एक अमीर और उसका गाड़ीवाला घोड़ों का सौदा कर रहे थे।

वहीं पर एक सुंदर और नयी घोड़ा गाड़ी थी। उन्हें एक घोड़ी पसंद आयी।

घोड़ों के सौदागर ने पूछा–"ये दोनों घोड़ियाँ माँ और बेटी हैं। क्या तुम लोग पहचान सकते हो कि इन में से कौन माँ है और कौन बेटी है?"

दोनों घोड़ियाँ देखने में जुड़वीं लगती थीं। अमीर और गाड़ीवाले को भी उन दोनों घोड़ियों में कोई अंतर मालूम न हुआ।

"मैं बताता हूँ!" यों कहते रामेश्वर आगे बढ़ा। उसने एक ऊबड़-खाबड़ प्रदेश में जहाँ-तहाँ आग जलायी और दोनों घोड़ियों को हांक दिया। एक घोड़ी हिम्मत के साथ आग की लपटों के बीच से

रास्ता देखते आगे बढ़ी। दूसरी घोड़ी जहाँ-तहाँ गढ्डों में पानी और आग की लपटों को देख पीछे लौटी। रामेश्वर ने बताया कि पहली घोड़ी माँ है और दूसरी घोड़ी बेटी है।

अमीर रामेश्वर की अक़्लमंदी पर बड़ा ख़ुश हुआ। उसने दोनों घोड़ियाँ ख़रीद लीं और रामेश्वर से कहा–"तुम मेरे घर आओ, कोई पुरस्कार लेकर जाओ।"

"मेरे तो अपना कोई नहीं है। मैं कहाँ जा सकता हूँ? कोई काम देकर मुझे अपने ही घर रहने दीजिए।" रामेश्वर ने जवाब दिया।

अमीर अपनी गाड़ी में रामेश्वर को घर ले गया। अमीर की बेटी रत्नावती रामेश्वर की ओर एकटक देखने लगी।

अमीर ने अपनी बेटी से पूछा–"बेटी, ऐसा क्यों देखती हो?"

"क्या इन दोनों घोड़ियों को इस युवक ने दौड़ाया है?" रत्नावती ने अपने पिता से पूछा।

"हाँ, बेटी!" अमीर ने जावाब दिया।

"तुमने क्या गीत गाकर दो बैलों की चोरी की है?" रत्नावती ने पूछा।

"जी हाँ, मैंने चोरी की है? मगर मैं चोर नहीं हूँ।" रामेश्वर ने उत्तर दिया।

"तुम एक बार मुझे देख भाग गये हो न?" रत्नावती ने फिर पूछा।

"जी हाँ! मैंने यह बात अयोध्यानंदन से नहीं बतायी, इसलिए उसने मुझे घर से भगा दिया।" रामेश्वर ने कहा।

रत्नावती विवाह के योग्य हो गयी थी। अमीर ने अनेक रिश्ते देखे, पर रत्नावती को पसंद न आये। वह यही कहा करती थी–"मेरे साथ विवाह करनेवाला एक दिन आपके साथ हमारे घर आ जाएगा।"

यह बात रत्नावती ने अपने पिता को याद दिलायी। अमीर ख़ुश हुआ। उन दोनों का विवाह करके रामेश्वर को अपने ही घर रख लिया।

चोर

एक गाँव में दीनू चौधरी नामक मुर्गियों का एक व्यापारी था। वह अव्वल दर्जे का धोखेबाज था। उसके पास कुछ पालतू मुर्गियाँ थीं। वह रोज़ उन्हें मछलियाँ खिलाता, कुछ सूखी मछलियों को तागे में पिरोकर उनके गले में मालाओं की भांति पहना देता और उन्हें गाँव में हाँक देता। सूखी मछलियों के वास्ते गाँव की अन्य मुर्गियाँ व मुर्गे उनका पीछा करते और दीनू चौधरी के घर पहुंच जाते। दीनू चौधरी उन मुर्गियों को पकड़ लेता, उनके परों पर तरह-तरह के रंग लगाता जिससे उन मुर्गियों के मालिक उन्हें पहचान न पाते। तब उन मुर्गियों को बेचकर दीनू रुपये बना लेते! पर सारे गाँववालों को इस बात का पता न था कि सारी मुर्गियाँ कैसे गायब होती हैं और कहाँ जाती हैं।

उसी गाँव में रामी नामक एक विचित्र आदमी था, उसके पीछे हमेशा एक बिल्ली और दो मुर्गे रहा करते थे। उन पर वह जान देता था। उसे शिकार खेलना ज्यादा पसंद था, दूसरों के कामों में दखल न देता था। उसने भी सुना कि गाँव की मुर्गियाँ गायब होती जा रही हैं। पर उसने कोई ध्यान न दिया।

लेकिन एक दिन अचानक उसके दो मुर्गे गायब हो गये। उनके वास्ते रामी बच्चे की तरह रोया। तब उसके मन में यह बात बैठ गयी कि किसी न किसी तरह मुर्गियों के चोर को जरूर पकड़ना चाहिए। उस दिन से लेकर वह गाँव में घूमते मुर्गियों की जांच करने लगा।

एक जगह रामी ने एक विचित्र बात देखी। एक मुर्गी आगे दौड़ती जा रही है और उसके पीछे कुछ मुर्गे व मुर्गियाँ

सुरेन्दर पाल

जा रही हैं। रामी उनके पीछे गया, तब जाकर उसने पता लगाया कि आगे जानेवाली मुर्गी के गले में सूखी मछलियों की माला है, उन मछलियों के वास्ते बाक़ी मुर्गियाँ उसका अनुसरण कर रही हैं। सोचने पर उसे लगा कि कोई जान-बूझकर यह काम कर रहा है।

आगे जानेवाली मुर्गी सीधे दीनू चौधरी के घर में घुस पड़ी, बाक़ी मुर्गियाँ भी उसी घर में चली गयीं। रामी की समझ में आया कि गाँव की मुर्गियाँ कैसे गायब हो रही हैं। उसने उसी वक़्त निर्णय कर लिया कि उसे क्या करना है। वह तुरंत घर लौट आया, शराबी की तरह अपना वेष बदलकर दीनू के घर पहुँचा। उस वक़्त दीनू मुर्गों के परों पर रंग लगा रहा था।

रामी अपने हाथ की शराब की बोतल को हिलाते नशे का अभिनय करते बोला– "देखो काका! तुम जो कुछ कर रहे हो, यह गलत है, पाप है। परों को काट दो तो कोई पहचान नहीं सकता।"

यह बात सुनने पर दीनू का कलेजा कांप उठा–"अरे, ऐसी कोई बात नहीं है। रंग लगाने से अच्छे भाव बिकती हैं। हाँ, बताओ तो, तुम किसी काम पर आये मालूम होते हो?" दीनू ने पूछा।

"बात कुछ नहीं, काका! आज कोई शिकारी हाथ न लगा। मांस के बिना खाना फीका लगता है। बढ़िया मुर्गे हो तो दिखाओ।" रामी ने कहा।

"क्यों नहीं, कल ही तो बढ़िया माल आया है।" दीनू ने उत्तर दिया।

"तो दिखाओ न।" यों कहते रामी भीतर चला गया। उसने देखा कि रंग-बिरंगी मुर्गे व मुर्गियाँ दर्जनों हैं। उनमें उसके दो मुर्गे भी हैं, पर उन्हें पहचानना कोई आसान बात नहीं है। रामी ने अपनी बोली में पुकारा, तब उसके दोनों मुर्गे उसके पास आ पहुँचे।

फिर क्या था, रामी को आँखें चमक उठीं। लेकिन दूसरे ही क्षण वह बोला– "धत्, ऐसे देहाती मुर्गे मुझे नहीं चाहिए। इन्हें मैं छूता तक नहीं।" यों कहते रामी वहाँ से चला गया। रामी के जाने पर दीनू ने सुख की साँस ली। उसे इस बात की हिमात हुई कि रामी नशे में है, इसलिए उसका रहस्य खुल नहीं सकता।

दूसरे दिन रामी अपनी बिल्ली के साथ दीनू के घर के समीप ताक लगा कर खड़ा हो गया। दीनू ने रोज की भाँति मुर्गियों के गले में सूखी मछलियों का हार डाल कर गाँव में हांक दिया। दीनू के देखते रामी ने अपनी बिल्ली को मुर्गियों पर उकसा दिया। बिल्ली ने झट दीनू की मुर्गियों के कंठ पकड़ कर मार डाला।

इसे देख दीनू गुस्से में आया। उसने न्यायाधिकारी के पास जाकर शिकायत की कि रामी ने मुर्गियों को बिल्ली के द्वारा मरवा डाला है और गाँव की मुर्गियों के गायब हो जाने का यही कारण है।

न्यायाधिकारी ने रामी को बुलवा कर पूछा–"क्यों, तुम्हीं तो रोज गाँव की मुर्गियों को अपनी बिल्ली के द्वारा मरवा डाल रहे हो?"

"हुज़ूर! यह तो बड़ा अन्याय है। मेरी बिल्ली ने कभी किसी मुर्गी को नहीं

मारा। वह सिर्फ़ सूखी मछलियों को खाती है।" रामी ने जवाब दिया।

"फिर क्या, मेरी मुर्गियों के गले में सूखी मछलियाँ थीं। तुम्हारी बिल्ली ने मेरी मुर्गियों को खाया है। यह बात झूठ नहीं है।" दीनू ने कहा।

न्यायाधिकारी ने आश्चर्य में आकर पूछा–"यह क्या, तुम्हारी मुर्गियों के कंठों में सूखी मछलियाँ क्यों हैं?"

दीनू घबरा गया। उनके मुँह से बात न निकली। तब रामी ने न्यायाधिकारी से कहा–"सरकार! इसी में है असली रहस्य! गाँव की मुर्गियों के गायब होने में और दीनू के साथ गहरा संबंध है। ये अपनी

मुर्गियों के कंठों में सूखी मछलियों की मालाएँ पहना कर गाँव में हाँक देते हैं। उन मछलियों को खाने के लिए गाँव की अन्य मुर्गियाँ उनके पीछे दीनू चौधरी के घर चली जाती हैं। उन मुर्गियों के परों को दीनू इसलिए रंग चढ़ाते हैं जिससे मुर्गियों के मालिक उन्हें पहचान न पावे। मुर्गियाँ पाने के लिए ये मुर्गियों को ही काम में ला रहे हैं। दीनू चौधरी की चोरी अक़्लमन्दी से भरी हुई है।"

"यह सब झूठ है। आप इसकी बातों पर विश्वास न कीजिएगा!" दीनू चिल्ला उठा।

"फिलहाल मेरे दो मुर्गे दीनू के घर में हैं। आप सब मेरे साथ आइये, मैं अभी साबित कर सकता हूँ।" रामी ने निवेदन किया। न्यायाधिकारी के साथ अदालत में रहनेवाले सभी लोग रामी के पीछे दीनू के घर गये। वहाँ पर उन्हें तरह-तरह की मुर्गियाँ दिखायी दीं। सबके देखते रामी ने अपनी बिल्ली को मुर्गियों के बीच छोड़ दिया।

बिल्ली को देखते ही मुर्गे व मुर्गियाँ शोरगुल मचाते तितर-बितर हो गयीं। लेकिन सिर्फ़ दो मुर्गे विचित्र आवाज़ करते स्नेहभाव से बिल्ली के पास पहुँचे। बिल्ली प्रसन्नता पूर्वक आँखें बंदकर उनके बीच बैठ गयी। सबको स्पष्ट मालूम हो गया कि वे दोनों रामी के मुर्गे हैं और बिल्ली के साथ उनकी मैत्री है।

इस पर रामी ने न्यायाधिकारी से कहा—"आप देख रहे हैं न, यहाँ पर जो मुर्गियाँ हैं, सब गाँववालों की हैं। हाँ, दीनू ने उन पर रंग लगाये हैं, इसलिए इन्हें पहचानना मुश्किल है।"

यह बात पल भर में सारे गाँव में फैल गयी। जिनकी मुर्गियाँ गायब हो गयी थीं वे सब दीनू के घर दौड़े आये। सभी मुर्गियों व मुर्गों के रंगों को धोकर अपनी मुर्गियों को पहचान गये और अपने घर ले गये। न्यायाधिकारी ने दीनू को कठिन सज़ा दी।

आधी रात का व्यापार

बधिया का पति जब मर गया, तब देहात में कोई आजीविका न पाकर वह शहर पहुँची और एक उजड़े घर में जा बसी। उसने सोच-विचार करके बड़े और पकौड़े बेचकर पेट भरने का निश्चय कर लिया। उसका विचार था कि तड़के ही उठकर बड़े और पकौड़े बनाकर सूर्योदय के होते ही चबूतरे पर बैठकर उन्हें बेच दे।

आधी रात के समय पड़ोसी घर के मुर्गे ने बिल्ली को देख बांग दिया। मुर्गे की बांग सुनकर बधिया हड़बड़ा कर उठ बैठी। उसने सोचा कि सबेरा होने को है। आटा बनाकर पिछवाड़े में चूल्हा जलाया। पकौड़े और बड़े बनाने लगी। उनकी गंध हवा में चारों ओर फैल गयी।

"बेटी, तुमने शायद नया-नया यह व्यापार शुरू किया है।" यों कहते एक बूढ़ा वहाँ पर आ पहुंचा।

"जी हाँ, क्या गरम-गरम पकौड़े खाओगे?" यों कहकर बधिया ने एक पीढ़ा लाकर डाल दिया और चार बड़े, थोड़े से पकौड़े एक पत्तल में परोसा।

बूढ़ा बड़े और पकौड़े खा ही रहा था, तभी चार और लोग वहाँ पर आ पहुँचे। सबने मिलकर बड़े और पकौड़े खा लिये, तब कहा—"बेटी, तुमने बड़ा ही अच्छा व्यापार शुरू किया है। रोज़ इसी तरह बड़े और पकौड़े बनाते रहो। हमें रोज़ इस वक़्त नींद नहीं आती, इसलिए वक़्त काटने के लिए यहाँ आ जायेंगे और गरम-गरम पकौड़े खा लेंगे।"

एक ने जाते समय बधिया से कहा—"कल तुम गेहूँ की रोटियाँ और मुर्गी का मांस बनाओ, पर सुनो, यह बात सबसे न कहना।"

सुधीर कुमार

बधिया उसकी बातें सुन मन ही मन हँस पड़ी। उसने समझ लिया कि ये लोग सबके सामने खाने से संकोच करते हैं और गुप्त रूप से आकर खाते हैं।

"अच्छी बात है, भाई! ऐसा ही करूँगी! क्या मैं इतना भी नहीं जानती?" बधिया ने बूढ़े से कहा।

पकौड़े और बड़े खाने के बाद पांचों ने अपनी इच्छानुसार पैसे दे दिये और वहां से चले गये। उन पैसों को गिनकर देखा तो बधिया को आश्चर्य हुआ। क्यों कि उसके अनुमान से भी चार-पाँच गुने ज्यादा रक़म थी। बधिया यह सोचकर खुश हुई कि उसका व्यापार बड़ा ही फ़ायदे मंद रहा!

इसके थोड़ी देर बाद ही पूरब में सूरज उग आया। बधिया ने भांप लिया कि वह आधी रात के वक़्त ही जाग उठी है। उस दिन से रोज़ उसी वक़्त जागने का उसने निश्चय कर लिया।

दूसरे दिन बधिया ने दो मुर्गियां खरीदीं, आधी रात के वक़्त तक गेहूँ की रोटियां और मुर्गी का मांस तैयार किया। पिछली रात को जो पांच लोग आये थे, वे आज भी आये, रोटियां तथा मांस खाकर पैसे दे गये। उस दिन भी बधिया को अच्छा नफ़ा हुआ। इसी प्रकार बधिया का व्यापार नफ़े पर चलने लगा।

बधिया के घर के पिछवाड़े में जो पक्का मकान था, वह एक बनिये का था।
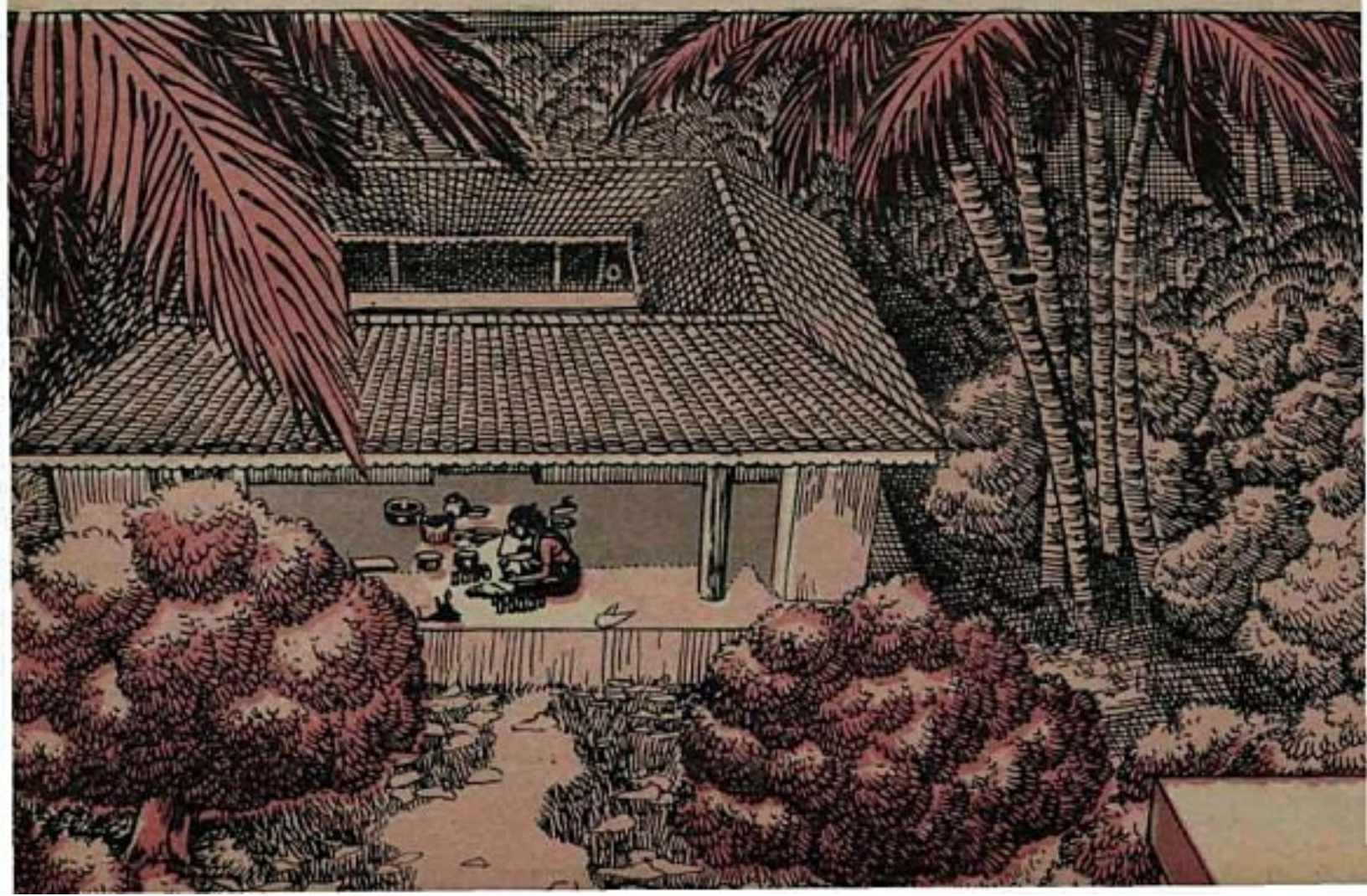
वह अव्वल दर्जे का कंजूस था। एक दिन की रात को उसे नींद नहीं आयी। कहीं से उसे बड़ी अच्छी खुशबू आने लगी। इसका पता लगाने के लिए वह छत पर गया। बंगल के घर के पिछवाड़े में बधिया अकेली बैठकर चूल्हे पर मुर्गी का मांस पका रही है। बनिया बड़े ही कुतूहल के साथ देखता रहा। उसके देखते-देखते कई लोग आये। बधिया ने सबको रोटियाँ और मांस परोसा, सबने खाकर पैसे दिये और चले गये।

सबके चले जाने के बाद बधिया वे पैसे गिनने लगी। एक साथ इतने पैसों को देखते ही बनिये की आँखें विस्फारित हो गयीं। "एक दिन में इतने पैसे! इस विधवा का काम बड़ा अच्छा मालूम होता है। इसके पास गुप्त रूप से ऐसे लोग आकर मांस खा जाते हैं जो सब शाकाहारी हैं। इसीलिए वे लोग पैसे उंडेल कर जा रहे हैं।" बनिया ने ईर्ष्या के साथ अपने मन में सोचा। उसके मन में यह लोभ पैदा हुआ कि किसी बहाने बधिया को वहाँ से भगाकर इस व्यापार पर क़ब्जा कर लेना चाहिए।

दूसरे दिन दुपहर को बनिया बधिया के घर आया। बधिया के प्रति सहानुभूति दिखाते हुए कहा–"बेचारी, तुम तो देखने में बड़ी सुंदर लगती हो! पर यह तुम क्या कर रही हो? मुझे तो बिलकुल अच्छा नहीं लगता।"

बधिया की समझ में नहीं आया कि बनिया क्या कह रहा है। इसलिए वह बनिये की ओर भोली और सहमी हुई दृष्टि से देखती रह गयी।

"लो, अभी तुम्हारी दृष्टि बावली-सी हो गयी! हाँ, हाँ, क्यों नहीं होगा? पिशाचों को रोज रात को खिलाती हो न?" बनिये ने कहा।

इस पर भी बधिया की समझ में नहीं आया। तब बनिया बोला—"तुम्हारा चेहरा देखते ही मालूम होता है कि तुम्हें पिशाचों की हवा लग गयी है! आधी रात के वक़्त तुम्हारे घर आनेवालों को तुम रोटी और मांस पका कर नहीं खिलाती हो?"
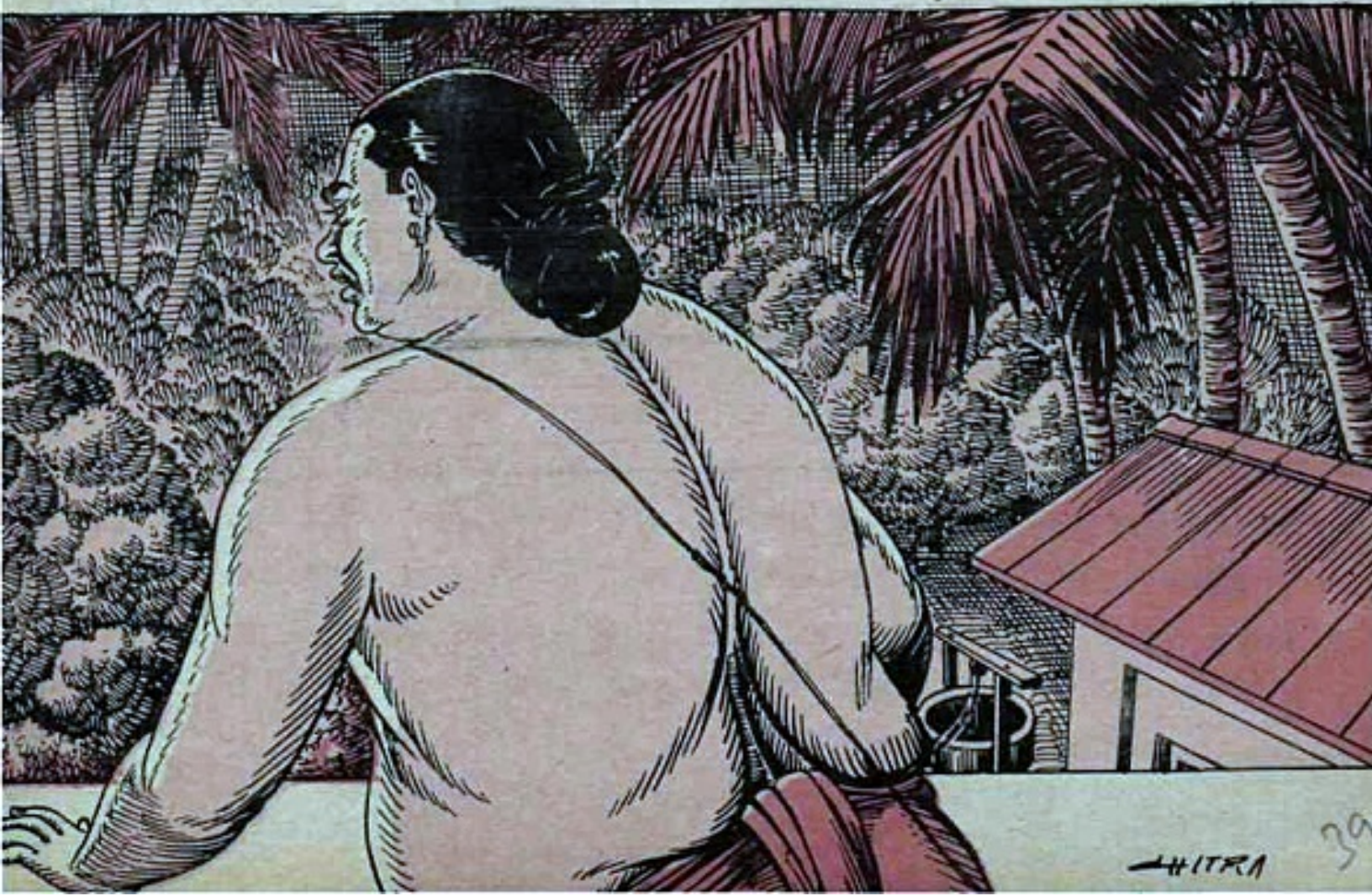
"इस में क्या हर्ज है? बुजुर्गों ने पूछा और मैंने मांस पका कर खिलाया।" बधिया ने सहज भाव में उत्तर दिया।

"तुमसे इसी प्रकार पकवा कर खा लेंगे। आखिर एक दिन वे पिशाच तुम्हें ही पका कर खा लेंगे! मैं तुम्हारी भलाई के लिए असली बात बताता हूँ, फिर तुम्हारी इच्छा।" बनिये ने कहा।

ये बातें सुन बधिया घबरा कर बोली—"क्या आधी रात के वक़्त मेरे घर आनेवाले लोग आदमी नहीं, पिशाच हैं?"

"क्या तुम्हें अब भी विश्वास नहीं होता? इसके पहले इस घर में एक बूढ़ी रहती थी, उसे इन्हीं पिशाचों ने आखिर जला कर खा डाला है! अब भी कुछ बिगड़ा नहीं, तुम जल्दी यहाँ से भाग जाओ। यहाँ रहोगी तो ये पिशाच तुम्हें छोड़ोंगे नहीं।" बनिये ने डरा दिया।

बधिया ने उसी वक़्त अपने सारे सामान जुटा लिये। बनिये से विदा लेकर किसी दूसरे गाँव के लिए चल पड़ी।

बनिया खुशी खुशी अपने घर लौटा, सारी बातें अपनी पत्नी को सुनाकर बोला—"अरी रानी, आज से बधिया की जगह तुम बैठ जाओ! सोने की वर्षा होगी, समझी! सोने की वर्षा!"

"ओह! मैं नहीं बैठूंगी! बधिया साधारण औरत नहीं, वह इतनी आसानी से यहाँ से नहीं जाएंगी। ठीक वक़्त पर लौट आयेगी और झगड़ा करेगी। चाहे तो तुम्हीं वहाँ पर बैठ जाओ। देख लो, बधिया ठीक वक्त पर आकर हो हल्ला मचा देगी।" बनिया की पत्नी ने समझाया।

दूसरे दिन आधी रात के वक्त बधिया की जगह पकौड़े बनाते बनिया बैठ गया। थोड़ी देर बाद सब बूढ़े आ पहुँचे। उन लोगों ने बनिये से पूछा—"अरे भाई, यहाँ रहनेवाली औरत कहाँ गयी है?"

"वह शादी करके अपने पति के साथ चली गयी है। तुम लोगों को कोई तक़लीफ़ न हो, इस ख्याल से मैं ही बड़े और पकौड़े बना रहा हूँ।" बनिये ने तवे पर कलछी चलाते कहा।

पकौड़े देख सबके तेवर चढ़ गये, धमकी के स्वर में बोले—"आज तुमने पकौड़े और बड़े बनाये, कोई बात नहीं, लेकिन कल तुम मुर्गी और भेड़ का मांस बनाओ।"

बनिया इस बात की कल्पना करके डर रहा था कि कहीं बधिया न आ धमके, उसने बूढ़ों से कहा—"तुम लोग पहले पैसे देकर तब खा लो! वरना अंधेरे में धोखा देकर भी चले जाओगे, क्या पता?"

ये बातें सुनते ही बूढ़ों की आँखों से आग बरसने लगी। वे बोले—"अरे बदमाश! पैसे न देने पर हमें खाने न दोगे? तुम्हारी कैसी हिम्मत? हम जो जो मांगते हैं, वे सब बनाकर खिलाओ। वरना तुम्हें इसी चूल्हे में जलाकर खा डालेंगे। तुम अगर भाग जाने की कोशिश करोगे, तब भी हम तुम्हें नहीं छोड़ेंगे।" इसके बाद सारे बड़े और पकौड़े खाकर पैसे दिये बिना सब बूढ़े गायब हो गये।

उस दिन से बनिया बिना एक पैसे की आमदनी के आधी रात का व्यापार करता रहा। वह रोज़ हजारों देवताओं की मनौतियां करता रहा कि बधिया लौट आवे, पर वह लौटकर नहीं आयी।

मनौती

एक गाँव में एक किसान था। उसकी पत्नी एक बार बीमार पड़ी। दवा-दारू की गयी। पर कोई फ़ायदा न रहा। इस पर किसान उस गाँव के मंदिर में गया। भगवान के सामने प्रणाम करके मनौती की। अगर उसकी पत्नी की बीमारी दूर हो जायगी तो वह अपनी एक मात्र गाय को बेच देगा। उससे जो रुपये मिलेंगे, वे मंदिर की हुंडी में डाल देगा। इस मनौती के बाद किसान की पत्नी जल्दी स्वस्थ हो गयी।

किसान को अपनी मनौती चुकाना पड़ा। वह गाय के साथ एक बिल्ली को भी लेकर हाट में पहुँचा; वहाँ पर कोई गाय को ख़रीदने आया। उसने गाय का मोल-भाव किया। किसान ने कहा–"गाय का दाम एक रुपया है; पर बिल्ली को ख़रीदे बिना गाय ख़रीदी नहीं जा सकती। बिल्ली का दाम सौ रुपये हैं।"

गाय का दाम ही सौ रुपये से कम न हो सकता था। इसलिए ग्राहक ने एक सौ एक रुपया देकर बिल्ली और गाय को ख़रीद लिया। किसान ने मंदिर की हुंडी में गाय का दाम एक रुपया डाल दिया। बचे हुए सौ रुपये देकर एक और गाय ख़रीदी; फिर वह आराम से अपने दिन काटने लगा।

बासी भात!

प्राचीन काल में एक देश पर एक राजा शासन करता था। वह बड़ा दानी और धर्मात्मा था। स्वयं जनता के सुख-दुखों का ख्याल रखता था। जब तब वेश बदलकर अपने राज्य में घूमते प्रजा की हालत जान लेता था।

उसी देश में एक धनी था। वह बड़ा ही स्वार्थी था। किसी को विपत्ति में देखकर भी वह दान न देता था। दान का नाम सुनते ही उसे बुखार चढ़ आता था। उसकी पत्नी गरीबों के प्रति बड़ी दया रखती थी। उसके पति के घर पर न रहते समय अगर कोई भिखारी आता तो थोड़ा-बहुत दान देकर भेज देती।

एक दिन धनी की जन्मगांठ पड़ी। उसकी पत्नी ने अच्छे अच्छे पक्वान बनाये और पति को परोसा। धनी बड़ी खुशी से मिष्टान्न खा रहा था। तभी एक भिखारी द्वार पर आया और चिल्लाने लगा–"माई, भूख के मारे मरा जा रहा हूं, थोड़ा खाना खिलाओ।"

धनी ने भिखारी की चिल्लाहट सुनी, पर वह मौन रहा। उसने सोचा कि भिखारी चिल्ला-चिल्लाकर अपने आप चला जाएगा। धनी की पत्नी को भिखारी पर दया आयी, मगर वह उस भिखारी को दुतकार कर भगा नहीं पायी।

आखिर भिखारी ने सोचा कि चिल्लाने से कोई फ़ायदा नहीं, वह पुकार उठा–"माई जी, क्या मैं चला जाऊं?"

धनी की पत्नी ने सोचा कि कम से कम इस हालत में ही सही उसका पति भिखारी को खाना देने को कहेगा। मगर धनी खाने में ही मगन था। इस पर धनी की पत्नी ने चिल्लाकर कहा–"मेरे पतिदेव बासी भात खा रहे हैं,

शीतला प्रसाद

तुम किसी दूसरे घर जाकर भीख मांग लो, बेटा!"

यह सारी घटना वेष बदलकर घूमनेवाले राजा ने गली में खड़े होकर देखी। उसने देखा कि धनी गरम-गरम मिष्टान्न मजे से खा रहा है और उसकी पत्नी भिखारी से यह न कहकर कि "थोड़ी देर बाद आ जाओ," यह झूठ. क्यों बोल रही है कि उसका पति बासी भात खा रहा है। राजा ने बहुत सोचा, पर उसकी समझ में बात न आयी।

दूसरे दिन राजा के सिपाही धनी के घर आये। यह कहकर धनी की पत्नी को राज-दरबार में बुला ले गये कि राजा ने उसे बुला भेजा है। धनी यह सोचकर डर गया कि उसकी पत्नी ने क्या अपराध किया है और वह भी डरते-डरते राज-दरबार में पहुँचा।

राजा ने धनी की पत्नी से पूछा—"कल तुम्हारा पति गरम-गरम मिष्टान्न खा रहा था, तब तुमने भिखारी से यह क्यों कहा कि तुम्हारा पति बासी भात खा रहा है? क्या तुम नहीं जानती कि झूठ बोलना अपराध है?"

इस पर धनी की पत्नी ने हँसकर जवाब दिया—"महाराज, मेरी बातों में झूठ ही क्या है? बासी भात का अर्थ है कि पूर्व जन्म में किये गये पुण्य के कारण इस जन्म में प्राप्त होनेवाली संपत्ति। फिलहाल मेरे पति उसी संपत्ति का अनुभव करने में निमग्न हैं। उन्होंने इस जन्म में थोड़ा भी पुण्य कार्य करके अगले जन्म के लिए कुछ बचा नहीं रखा। मैंने भिखारी से यही बात कही। आपने मेरी बातों का गलत अर्थ लगाया है।"

राजा धनी की पत्नी की अक़्लमंदी पर प्रसन्न हुआ। उसने धनी से कहा—"तुम अपनी पत्नी की बातों पर ध्यान देकर अब भी सही ठीक से व्यवहार करो।" इसके बाद राजा ने धनी की पत्नी को रेशमी साड़ी भेंट की। उस दिन से धनी ने दान और धर्म करना प्रारंभ किया।

देखकर सीख लो!

एक गाँव में माँ और बेटे थे। बेटे का नाम मंगल था। वह अक़्लमंद था, लेकिन उसने सिवाय पेट भर खाने के कुछ नहीं सीखा।

एक दिन माँ ने कहा—"बेटा, तुम शादी करने के लायक़ हो गये हो! बिना कमाये अपनी औरत को कैसे पालोगे?"

"माँ, मैंने तो कोई काम नहीं सीखा, क्या करूँ?" मंगल ने अपनी माँ से पूछा।

"सुनो, पैदा होते ही कोई काम करना नहीं जानता। किसी को काम करते देखकर सीखना होगा। हमारे घर के सामने एक आदमी जूता सीकर और मरम्मत करके जीता है। दूसरा हज़ामत करके अपना पेट पालता है। तीसरा नये कपड़े सीकर और फटे-पुराने कपड़ों में मरम्मत करके अपना परिवार चलाता है। उन्हें देखकर तुम सबक़ सीख लो!" माँ ने समझाया।

यह बात मंगल के दिमाग़ में बैठ गयी। वह अपने घर के सामने बैठकर जूते सीनेवाले को, नाई और दर्जी की ओर ग़ौर से देखने लगा।

"चबूतरे पर बैठकर तुम दिन-भर क्या करते हो, बेटा?" माँ ने पूछा।

"माँ, तुम्हारे कहे मुताबिक़ देखकर सीख रहा हूँ।" मंगल ने जवाब दिया।

एक दिन अचानक जूते सीनेवाले की, नाई और दर्जी की भी मांग बढ़ गयी। लोग भीड़ लगाकर आते, नये जूते ख़रीदने और पुराने जूतों की मरम्मत कराने लगे। कुछ लोग नये कपड़े सिलाने लगे और हज़ामत कराने लगे।

मंगल ने लोगों से पूछकर जान लिया कि कई साल बाद उसे देश के राजा का एक पुत्र हुआ है और उसकी जन्म गाँठ

रमाशंकर द्विवेदी

आनेवाली है। उस दिन राजा सब को खाना खिलानेवाला है। प्रतियोगिताएँ चलानेवाला है। उन प्रतियोगिताओं में जो विजयी होंगे, उन्हें पुरस्कार दिये जायेंगे।

मंगल भी अच्छे कपड़े पहन कर दावत खाने चला गया। खाने के बाद तरह-तरह की प्रतियोगिताएँ हुईं। सवाल-जवाब की भी प्रतियोगिता चली। इस प्रतियोगिता में कोई भी सवाल कर सकता है और कोई भी जवाब दे सकता है। उसमें अच्छे सवाल पूछनेवालों तथा अच्छे जवाब देनेवालों को भी पुरस्कार दिये जाते हैं।

मौक़ा पाकर मंगल ने कहा—"मैं भी तीन सवाल पूछना चाहता हूँ। क्या मुझे अनुमति मिल सकती है?" उसे अनुमति मिल गयी।

"एक नीचे देखते काम करता है, एक ऊपर देखकर, तीसरा ऊपर और नीचे देखते काम करता है। वे कौन है?" मंगल ने पूछा।

एक पंड़ित ने उठकर कहा—"नीचे देखनेवाला साधु है। वह दुनिया पर अपनी दृष्टि जमाये बिना अपना काम करता जाता है, ऊपर और नीचे देखनेवाला आदमी भक्त है। उसकी दृष्टि हमेशा भगवान पर ही जमी रहती है!"

यह जवाब मंगल को पसंद न आया। उसने पूछा—"उनकी दृष्टि और काम का भी संबंध बताना होगा!"

"तब तो अपने सवाल का जवाब तुम्हीं दो।" सब ने एक स्वर में कहा।

"नीचे देखते काम करनेवाला जूते सीनेवाला है। मनुष्यों के सिर पर दृष्टि जमानेवाला व्यक्ति नाई है। मनुष्यों के सिर से पैर तक देखनेवाला व्यक्ति दर्जी है।" मंगल ने जवाब दिया।

यह जवाब सुनकर सब लोग खुश हुए। उसके सवाल के लिए पांच सौ तथा जवाब के लिए पांच सौ रुपये पुरस्कार प्राप्त हुए। उसने उन रुपयों को ले जाकर अपनी माँ के चरणों पर रखा और कहा—"माँ, देखकर सीखने का फल है यह!"

अनोखी भेंट

मालव देश के राजा भोजराज की दानशीलता के बारे में एक गरीब ब्राह्मण ने सुन रखा था। यह भी सुना था कि राजा रोज़ अनेक लोगों का सम्मान करते हैं और उनके दरबारी कवि कालिदास गरीबों को किसी न किसी प्रकार दान दिलाते हैं। वह ब्राह्मण सीधे धारा नगरी में गया। कालिदास के दर्शन कर बताया कि वह परम दरिद्र है, पढ़ना-लिखना नहीं जानता है। परिवार के भार से दबा हुआ है, इसलिए कोई न कोई उपाय करके उसकी दरिद्रता को दूर करे।

कालिदास ने ब्राह्मण को समझाया– "मैं अपनी शक्ति भर प्रयत्न करूंगा। इसके बाद तुम्हारी क़िस्मत जैसी होगी, वैसा होगा; लेकिन राजा के दर्शन करने के लिए तुम खाली हाथ मत आओ, कोई भेंट लेकर आ जाओ, और द्वार पर इंतज़ार करो। भीतर आ जाने का जब बुलावा आयेगा, तब तुम राजा के सामने आकर अपनी भेंट समर्पित करो। मगर तुम राज-दरबार में मौन रहो। इसके बाद तुम्हारा भाग्य जैसा होगा, सो होगा।"

दूसरे दिन उस ब्राह्मण ने किसी से एक गन्ना मांग लिया। उसके टुकड़े करके अपनी पगड़ी में बांध लिया। तब राजमहल के द्वार के पास पहुँच कर एक ओर बैठ गया।

दरबार में से बुलावा आने के पहले बेचारे गरीब ब्राह्मण को नींद आ आयी। उसने नींद को रोकने की बड़ी कोशिश की, पर कोई फ़ायदा न रहा, आखिर लाचार हो पगड़ी को सिर के नीचे रख लिया और द्वार के पास सो गया।

विनय मोहन

उस ब्राह्मण से भी ज्यादा दरिद्र गन्ने के उन टुकड़ों के लोभ में पड़ गया। उसने ब्राह्मण के सिर के नीचे से पगड़ी निकाली, उसमें से गन्ने के टुकड़ों को निकाला, उनकी जगह जलकर ठण्डी हुई लकड़ियों को पगड़ी में बांधकर उसके सिर के नीचे रखा और वहाँ से भाग गया। गहरी नींद सोनेवाले उस ब्राह्मण को इस बात का बिलकुल पता न चला।

उस समय राज-दरबार में कालिदास ने चर्चा के दौरान राजा से कहा–"महाराज, आपके दर्शन के लिए दूर देश से एक महा पंडित आये हुए हैं और वे द्वार पर आपकी अनुमति के इंतजार में बैठे हैं। वे आज मौन व्रत धारण किये हुए हैं, आपकी जो आज्ञा।"

राजा ने तुरंत एक सेवक को पंडित को बुला लाने भेज दिया। उसने ब्राह्मण को जगाकर कहा–"महाशय, राजा के दर्शन के लिए आये हुए महा पंडित आप ही हैं?" पंडित के सिर हिलाने पर उसे राजा के सामने ले गया।

ब्राह्मण ने राजा के सामने अपनी पगड़ी खोल दी, उसमें जलकर बुझी हुई लकड़ी के टुकड़े थे। वह ब्राह्मण यह सोचकर एक दम चकित रह गया कि दरिद्र देवी उसका पीछा करते राज-दरबार में भी आ गयी है।

जली हुई लकड़ी के टुकड़ों को देख सभी दरबारी आश्चर्य में आ गये। राजा ने क्रोध भरी दृष्टि से कालिदास की ओर देखा।

कालिदास उस ब्राह्मण की मूर्खता पर मन ही मन खीझ उठा, फिर भी सोचा कि उसके प्राण बचाने की जिम्मेदारी उसी पर है, इसलिए कालिदास ने यों कहा–"महाराज, इस महा पंडित के द्वारा ऐसी भेंट समर्पित करने में एक अद्भुत रहस्य छिपा हुआ है। उसे यों कह सकते हैं:–

दग्धम् खाण्डव मर्जुनेन च वृथा
दिव्य ध्रुमैर्भूषितम्,
दग्धा वायुसुतेन हेमरचिता लंका
पुरी स्वर्ग भूः
दग्ध स्सर्व सुखास्पदश्च मदनो हा! हा!
वृथा शंभुना;
दारिद्रयम् धनतापदम् भुवि नृणाम्
केनापि नों दह्यते।

[दिव्य वृक्षों से भरे खण्डव वन को अर्जुन ने नाहक़ जला दिया, सोने से निर्मित व स्वर्ग समान लंकापुरी को हनुमान ने यूँ ही जला दिया। समस्त प्रकार के सुख देनेवाले मन्मथ को शिवजी ने वृथा ही भस्म कर दिया, लेकिन इस संसार में मानव-समाज को अत्यधिक पीड़ा देनेवाली दरिद्रता को कोई जला नहीं पाये।]

यह श्लोक सुनाकर कालिदास ने राजा से कहा–"संभवतः आप दरिद्रता को दग्ध करेंगे, इस विश्वास के साथ इस पंडित ने आपको ये जली लकड़ियाँ भेंट की हैं।"

ये बातें सुन राजा और राजदरबारी भी बहुत आनंदित हुए। राजा ने उस ब्राह्मण का आदर किया, बहुत-सा धन देकर भेज दिया। ब्राह्मण की समझ में न आया कि कालिदास ने कैसा श्लोक पढ़कर सुनाया और राजा ने उसे इतना सारा धन क्यों दिया, इसलिए वह ब्राह्मण बार बार पीछे मुड़कर देखते जाने लगा।

राजा ने कालिदास से पूछा–"वह पंडित बार बार पीछे मुड़कर देखते हुए क्यों जा रहे हैं?"

"महाराज, इस ख्याल से वे मुड़कर बराबर देखते जा रहे हैं कि कहीं दरिद्रदेवी उसका पीछा अब भी तो नहीं कर रही है?" कालिदास ने संदर्भानुसार अर्थ पूर्ण उत्तर दिया। "वाह! यह कैसे महान पंडित हैं? अगर वे मौन व्रत धारण किये न होते, तो उनके मुँह से अनेक अपूर्व बातें सुन लिए होते।" भोजराज ने मन में सोचा। बेचारे वे यह नहीं जानते थे कि कालिदास ने उन्हें धोखा दिया है।

बावला

लेबनान देश के एक गाँव में हनी और मरियम नामक एक दंपति थे । हानी वैसे स्वभाव का अच्छा था, पर थोड़ा भुलक्कड़ था । काम में ढीला था, मगर मरियम बड़ी होशियार थी । वह अमीरों के घरों में बर्तन मांझकर अपने और अपने पति का पेट भरती थी । वह रोज़ हनी पर ज़ोर डालती कि कहीं जाकर कोई काम ढूँढ ले, लेकिन हनी उसकी बातों की परवाह न करता, बल्कि हँसकर रह जाता ।

एक दिन मरियम अचानक बीमार पड़ी और वह काम पर न जा सकी, उसे हनी पर बड़ा गुस्सा आया । उसने हनी को समझाया–"तुम कोई काम करके चार पैसे न लाओगे तो आज हमें फ़ाका करना पड़ेगा । गाँव के मुखिये के पास जाकर गधों को हांक ले जाने का काम मांगो, उनके घर के काम के लिए गधों पर कुछ न कुछ सामन लादकर ले आना होता है ।"

दूसरे दिन सबेरे तड़के ही उठकर हनी मुखिये के घर गया । मुखिया जानता था कि हनी भोला है और उसकी पत्नी उसका पेट भरती है । हनी पर उसे दया आयी, उसकी मदद करने का विचार करके हनी के हाथ में सोने का एक दीनार रखा और एक गधे को ख़रीद लाने का आदेश दिया । हनी बीरूट नगर में गया । वहाँ की हाट में एक मोटे गधे को ख़रीद लाया और मुखिये का काम करने लगा । मुखिया हनी को रोज़ काम देता और उचित मज़दूरी देता था ।

एक दिन मुखिये ने हनी से कहा–"तुम बीरूट जाकर अमुक दुकान से एक बोरा चावल ख़रीद लाओ ।"

अरब की लोक कथा

हनी उस दुकान से परिचित था, मगर उस दिन उसे सुस्ती सी मालूम हुई, और बीरूट जाने की उसकी इच्छा न हुई। उसे लगा कि चावल खरीद लाने के लिए गधे को भेज दे तो वह मेहनत से बच सकता है और बिना मेहनत के काम भी बन सकता है।

हनी ने गधे के पास जाकर कहा– "सुनो, तुम अकेले बीरूट जाओ, फलाने दुकान से एक बोरा चावल खरीद लो। फिर तुम उस बोरे को हमारे मुखिये के घर पहुँचा सकते हो न?"

गधे ने रोज की आदत के मुताबिक़ अपने सिर को ऊपर-नीचे हिलाया। मगर हनी यह सोचकर खुश हुआ कि गधे ने उसकी बोली समझ ली है और उसके कहे मुताबिक़ करने को मान गया है। उसने गधे के सिर पर एक पगड़ी बांध दी, उसकी तहों में अपने मालिक से प्राप्त सोने का दीनार रखा। इसके बाद गधे को बीरूट के रास्ते पर छोड़ वह तब तक उसकी ओर देखता रहा, जब तक वह उसकी आँखों से ओझल न हुआ। इसके बाद वह निश्चित हो ठाठ के साथ सीटी बजाते घर लौट आया।

अपने पति को बेवक़्त बिना गधे के घर लौटे देख मरियम को बड़ा आश्चर्य हुआ। उसने पूछा–"क्या तुम बीरूट नहीं गये? गधा कहाँ?"

"मैंने गधे को अकेले मालिक के काम पर भेज दिया है! पहले मैंने उससे पूछा

कि क्या तुम अकेले बीरूट जाकर मालिक के लिए चावल का बोरा ख़रीद लाओगे? गधे ने मान लिया और वह बीरूट की ओर चला गया है।" हनी ने जवाब दिया।

"तुम्हारी अक्ल चरने गयी है! तुम काले अक्षर भैंस बराबर हो! तुम्हारे गधे और दीनार से भी हम आज हाथ धो बैठे! जाओ, तुरंत! उसे खोजो, बीरूट के रास्ते में जाओ। बिना गधे और चावल के घर मत आओ।" मरियम ने खीझकर कहा।

हनी घर से दौड़ पड़ा। बीरूट के रास्ते आगे बढ़ा। वह तब तक दौड़ता रहा, जब तक थकावट के मारे उसकी आँखें व जीभ बाहर निकल न आयीं। लेकिन फिर भी उसे कहीं गधा दिखायी नहीं दिया।

हनी बीरूट नगर में पहुँचा। अपनी परिचित दुकान में जाकर व्यापारी से पूछा—"क्या मेरे गधे ने आकर तुम्हारे यहाँ चावल ख़रीद लिया है? वह आज अभी तक घर लौट नहीं आया?"

चावल के व्यापारी ने हनी की ओर देखा, उसने समझ लिया कि यह कोई बावला है! तब उसे मजाक़ सूझी। उसने कहा—"तुम ठीक कहते हो! आज सुबह गधा मेरे यहाँ आया था, पर उसे मेरी दुकान के चावल पसंद न आये। इसलिए वह दूसरी दुकान में चावल ख़रीदने गया है!" यों कहते उसने एक दुकान की ओर संकेत किया।

हनी बगल की दुकान में गया। उस वक़्त पहले दुकानदार ने दूसरे दुकानदार को इशारा किया, दूसरे दुकानदार ने पहले दुकानदार के संकेत को समझ लिया। हनी के पहुँचते ही पूछा—"बताओ, तुम क्या चाहते हो?"

हनी ने उससे भी यही सवाल किया—"क्या मेरे गधे ने आकर तुम्हारी दुकान में चावल ख़रीद लिया है?"

"जी हाँ, तुम्हारा गधा आया था, लेकिन उसे बीरूट का चावल पसंद नहीं आया। वह यह बताकर जाफा नगर में गया है कि वहाँ का चावल अच्छा होता है।" दूसरे दुकानदार ने कहा।

हनी घबरा गया। उसे जाफा जाकर गधे को वापस लाना होगा, वरना मरियम उसे घर में क़दम न रखने देगी। इसलिए हनी ने उस दुकानदार से एक दीनार क़र्ज लिया और जाफा की ओर चल पड़ा।

जाफा में जाकर हनी ने सभी दुकानों को छान डाला, पर कहीं उसे गधे का पता न लगा। रास्ते चलनेवाले से पूछकर यह जान लिया कि उस शहर की सबसे बड़ी चावल की दुकान कहाँ पर है?

उस दुकान में जाकर हनी ने पूछा— "हमारा गधा मेरे मालिक के वास्ते चावल ख़रीदने के लिए यहाँ तो नहीं आया?"

उस दुकानदार की नगर के प्रधान न्यायाधिकारी के साथ पुरानी दुश्मनी थी। हनी की बातें सुनते ही उसने न्यायाधिकारी से बदला लेने को सूझी। उस दुकानदार ने हनी से स्नेहपूर्वक बातें कीं और कहा— "यह बात सच है कि तुम्हारा गधा थोड़ी देर पहले हमारी दुकान में आया था। वह चावल के भाव के बारे में मुझसे मोल-भाव करने लगा। दुकान में हलचल देख आसपास के लोग मेरी दुकान के पास इकट्ठे हो गये। तब तुम्हारे गधे की

अक्लमंदी पर खुश होकर लोगों ने उसे प्रधान न्यायाधिकारी के पद पर नियुक्त किया है। इस वक़्त वह मनुष्य का वेष धारण कर अदालत में फ़ैसले सुना रहा है।"

अलावा इसके दुकानदार हनी को अदालत तक ले गया और यह भी दिखाया कि न्यायाधिकारी कहाँ पर बैठता है!

हनी को इस बात का संदेह हुआ कि बड़ा ओहदा पाने के बाद उसे बुलाने पर उसका गधा उसके साथ न आवेगा। इसलिए उसने बाज़ार जाकर मूली का एक गठ्ठर ख़रीदा और जल्दी अदालत को लौट आया। मगर इस बार पहरेदार ने उसे भीतर जाने से रोक दिया। हनी पहरेदार से झगड़ा करने लगा।

न्यायाधिकारी ने शोरगुल सुनकर पूछा कि यह झगड़ा कैसा? उसे हनी का समाचार मालूम हुआ। न्यायाधिकारी ने भांप लिया कि यह करतूत चावल के दुकानदार की ही होगी, अपने क्रोध पर क़ब्ज़ा कर लिया और हनी को भीतर बुला भेजा।

हनी ने भीतर प्रवेश करके मूली के गठ्ठर को हिलाते हुए कहा–"यह मेरा गधा है, पर न्यायाधिकारी की पोशाकें पहने है। मैंने उसकी पगड़ी में सोने का एक दीनार भी छिपा रखा है।"

न्यायाधिकारी को मालूम हुआ कि हनी बावला है। उसने शांत स्वर में पूछा–"तुमने अपने गधे को कितने में खरीदा है?" हनी ने सच्ची बात बतायी कि उसने एक दीनार देकर खरीद लिया था। न्यायाधिकारी ने उसे चार सोने के दीनार देकर घर भेज दिया।

हनी ने सोचा कि उसका मामला सुलझ गया है। उसने एक गधा और चावल का एक बोरा खरीद लिया। अपने मालिक के घर पहुँचा कर तब अपने घर लौट आया। इसके बाद उसने कभी गधों की बातों पर विश्वास नहीं किया।

दूसरे दिन महाभारत का युद्ध शुरू होने वाला था, दुर्योधन ने अपनी सेना के प्रमुख योद्धाओं को बुलाकर पूछा–"आप लोगों के द्वारा पांडव-सेना का निर्मूल करने में कितना समय लग सकता है?"

भीष्म ने बताया कि उसे तो तीस दिन लग जायेंगे। द्रोण ने कहा कि वह वृद्ध और दुर्बल है, इसलिए वह भी तीस दिनों में पांडव-सेना का निर्मूल कर सकता है। कृपाचार्य ने बताया कि उसे तो दो महीने लग जायेंगे। अश्वत्थामा ने बताया कि वह दस दिनों में पांडव सेना का सर्वनाश कर सकता है। कर्ण ने पांच दिनों में पांडव सेना का निर्मूल करने की बात कही। तब भीष्म ने मंदहास करते हुए कहा–"अर्जुन कृष्ण की सहायता लेकर जब तक तुम्हारे सामने न आयेगा, तब तक तुम इसी प्रकार डींग मारते रहोगे!"

यह बात गुप्तचरों के द्वारा युधिष्ठिर ने जान ली और अर्जुन से कहा–"तुम कौरव सेना का निर्मूलन कितने दिनों में कर सकते हो?" इस पर अर्जुन ने कहा–"आप क्यों चिंता करते हैं? हमारे योद्धा निस्संदेह कौरव सेना का निर्मूलन कर सकते हैं। यदि मुझसे पूछा जाय तो मैं कहूँगा कि तीनों लोक एक साथ मुझ पर हमला करे तब भी मैं पल भर में जीत सकता हूँ। क्योंकि मेरे पास पाशुपतास्त्र है। यह अस्त्र भीस्म, द्रोण, कृपाचार्य तथा कर्ण के

५३. युद्ध के पहले

युद्ध के प्रारंभ होते समय व्यास महर्षि ने धृतराष्ट्र के पास आकर कहा–"राजन, तुम्हारे पुत्र और अन्य राजाओं की मृत्यु निकट आ गयी है। तुम्हारा उनके वास्ते दुख करना अनावश्यक है। यदि तुम युद्ध देखना चाहोगे, तो मैं तुम्हें दिव्य दृष्टि प्रदान करूँगा।"

इस पर धृतराष्ट्र ने उत्तर दिया–"महर्षि! मैं अपने ज्ञातियों की मौत कैसे देख सकता हूँ? मैं केवल युद्ध के बारे में विवरण सुन लूँगा। इसके लिए कोई मार्ग हो तो बताओ।"

"तब तो मैं ऐसा करूँगा जिससे सारा युद्ध क्षेत्र दिन-रात संजय की आँखों के सामने दिखायी दे। वह तुम्हें युद्ध के विवरण सुनाते रहेंगे।" व्यास ने समझाया। इसी प्रकार संजय धृतराष्ट्र को युद्ध के समाचार सुनाते रहे।

युद्ध के प्रारंभ होने के पूर्व कौरव सेना का महा सेनापति भीष्म राजाओं को इकट्ठा कर बोला–"राजाओ, आप सब के लिए स्वर्ग के द्वार खुले हुए हैं। उन द्वारों से होकर आप लोग इंद्रलोक तथा ब्रह्मलोक में जाइये। क्षत्रियों के लिए यही सही मार्ग है। आप लोग निर्भयतापूर्वक युद्ध कीजिए। क्षत्रिय को रोग का शिकार हो खाट पर मरना शोभा नहीं देता।

पास नहीं है। अलावा इसके आपकी मदद के लिए आये हुए योद्धाओं में कई लोग दिव्य अस्त्रों का ज्ञान रखनेवाले हैं।"

दूसरे दिन प्रात:काल के होते ही कौरव सेनाएँ पांडव सेनाओं की ओर बढ़ीं। दुर्योधन के पक्ष में निकले हुए राजाओं में परस्पर स्नेह और विजय की आकांक्षा व्यक्त हुई। कुरुक्षेत्र के मध्य भाग में शिविर का निर्माण कराकर उसे एक दूसरे हस्तिनापुर जैसे बनाया। वह देखने में नगर जैसा लगता था, दोनों पक्षों की सेनाएँ दो महा समुद्रों की भाँति कुरुक्षेत्र में मिल गयीं, तब बाक़ी दुनियाँ में केवल बच्चे, नारियाँ और बूढ़े बच रहें।

कर्ण ने यह प्रतिज्ञा की थी कि भीष्म के युद्ध क्षेत्र में रहते वह रणक्षेत्र में क़दम नहीं रखेगा, इसलिए कर्ण के सिवा सभी राजा युद्ध-घोष के साथ आगे बढ़े।

दोनों सेनाओं की व्यूह रचना हुई। पांडव सेना के आगे भीम चलने लगा। शिखंडी की सेना व्यूह के मध्य भाग में थी। दायीं दिशा की रक्षा सात्यकी कर रहा था। धृष्टद्युम्न सारे व्यूह में संचार कर रहा था। अर्जुन कृष्ण को अपने सारथी बनाकर रथ पर बैठा था। उसने अपने रथ को दोनों सेनाओं के बीच रोकने का कृष्ण से निवेदन किया। कृष्ण ने रथ को मध्य भाग में ले जाकर कहा–"अर्जुन, भीष्म, द्रोण इत्यादि कौरव योद्धाओं को एक बार देख लो तो।"

अर्जुन ने देखा कि उसके सामने उसके चाचे, दादा, गुरु, मामा, भाई, पोते-नाते आदि हैं। युद्ध में उन सब को मारने की कल्पना करते ही उसका शरीर कांप उठा; ऐसा लगा उसके हाथ से गांडीव छूटता जा रहा है!

"युद्ध में रिश्तेदारों को मारने से मुझे कोई प्रयोजन प्रतीत नहीं होता। मुझे राज्य और सुख-भोग भी नहीं चाहिए। अपने निकट जनों का वध करके त्रिलोकों पर भी अधिकार कर लूं तो क्या लाभ होगा? वंश क्षय के साथ धर्म का नाश होगा। हम महा पाप के भागी होंगे।" यों कहते अर्जुन रथ पर लुढ़क पड़ा।

अर्जुन की यह स्थिति देख कृष्ण ने कहा–"अर्जुन! यह तुम्मारी कैसी मानसिक बीमारी है? यह तुम्हारे लिए स्वर्ग का मार्ग प्रशस्त नहीं करेगी, बल्कि अपशय का कारण बनेगी। वीर के लिए यह शोभा नहीं देता। जन्म और मृत्यु को लेकर बुद्धिमान व्यक्ति शोक नहीं करते। आत्मा के लिए एक ही देह शाश्वत नहीं है। उसके लिए देह प्राप्त होती रहेंगी और छूटती भी होंगी; पर आत्मा अमर है। वह जीर्ण देहों को त्याग कर नयी

देहों को इस प्रकार धारण करती है जैसे शरीर फटे-पुराने कपड़ों को त्याग नये वस्त्रों को धारण करता है। इसलिए तुम युद्ध के लिए तैयार हो जाओ। युद्ध करना क्षत्रिय का उत्तम धर्म है। तुम युद्ध करना छोड़कर यश और स्वर्ग को खो मत बैठो। अपयश की अपेक्षा मृत्यु बेहतर है। युद्ध में विजयी होगे तो सुख भोगेगे! मर जाओगे तो स्वर्ग-सुखों का अनुभव करोगे। बुद्धिमानों का लक्षण है कि सुख-दुख, लाभ-हानि और विजय-पराजय को समान रूप में स्वीकार करें।"

कृष्ण के उपदेश के कारण अर्जुन में मानसिक परिवर्तन हुआ। इतने में युधिष्ठिर ने अपना कवच खोल दिया, अपने अस्त्र को एक ओर रख दिया, रथ से उतर कर हाथ जोड़े पैदल भीष्म की ओर चल पड़ा। इसे देख अर्जुन तथा अन्य पांडव भी रथों से उतर पड़े और युधिष्ठिर के पीछे चल पड़े। उनके पीछे कृष्ण भी चल पड़े।

अर्जुन ने युधिष्ठिर से पूछा–"राजन, हमें छोड़ इस प्रकार आप शत्रु-सेना के सामने क्यों जा रहे हैं?" भीम, नकुल और सहदेव ने भी युधिष्ठिर से यही प्रश्न पूछा। उनके प्रश्न सुनकर भी उत्तर दिये बिना युधिष्ठिर आगे बढ़ा। कृष्ण ने मुस्कुराते हुए उन लोगों से कहा–"ये पहले भीष्म, द्रोण, कृपाचार्य और शल्य की अनुमति लेकर तब युद्ध करनेवाले हैं। इस प्रकार बड़ों की अनुमति लेकर युद्ध करने से विजय की प्राप्ति होगी।"

इस बीच कौरव सेना में तरह-तरह की अफ़वाहें उड़ गयीं। "छी! युधिष्ठिर का जन्म क्षत्रिय वंश के लिए अपमानजनक है! युद्ध करने से डरकर अपने भाइयों के साथ भीष्म की शरण माँगने आ रहा है। ऐसे महान वीरों को भाइयों के रूप में पाकर डर जाना लज्जा की बात है! युद्ध क्षेत्र में कदम रखते ही उसका कलेजा कांप उठा है!" दोनों सेनाओं के बीच इस बात की जिज्ञासा बढ़ती गयी कि

युधिष्ठिर भीष्म से क्या पूछनेवाला है। उसका समाधान भीष्म क्या देनेवाले हैं। युद्ध का नाम सुनते ही भीम की भुजाएँ फड़क उठती हैं, वह क्या करने वाला है। कृष्ण और अर्जुन क्या क्या कहनेवाले हैं। ये सारी बातें सुनने को वे सब आतुर हो उठे।

युधिष्ठिर अपने भाइयों के साथ शत्रु-सेना में घुस पड़ा, भीष्म के निकट जाकर उसके चरणों पर गिर पड़ा और बोला—"दादाजी, युद्ध में कोई भी आपका सामना नहीं कर सकते। मैं आप की अनुमति लेने आया हूँ। आप हमें अनुमति देकर आशीर्वाद दीजिए।"

इस पर भीष्म ने कहा—"तुम मेरे पास आये, मुझे बड़ी प्रसन्नता हुई, तुम युद्ध करो, विजयी होगे। धन मानव को गुलाम बनाता है, इसलिए मुझे कौरवों की ओर से लड़ना पड़ा है। तुम मेरे इस कर्तव्य में विघ्न डाले बिना कोई भी वर माँग लो।"

"आप अजेय हैं! फिर भी आपको इस युद्ध में पराजित करने का उपाय क्या है? यदि आप हमारा हित चाहते हैं तो बताइये।" युधिष्ठिर ने पूछा।

"यही बात मैं नहीं जानता। युद्ध में कोई भी मुझे पराजित नहीं कर सकता। युद्ध में मेरी मृत्यु भी नहीं हो सकती। तुम फिर एक बार मेरे पास आओ।" भीष्म ने समझाया। युधिष्ठिर ने भीष्म को प्रणाम किया, तब अपने भाइयों के साथ द्रोण के रथ के पास गया। प्रदक्षिणा के प्रणाम करके बोला—"ब्राह्मणोत्तम! युद्ध करने के लिए आपकी अनुमति लेने आया हूँ। आपकी आज्ञा के विना मैं शत्रुओं को कैसे जीत सकता हूँ?"

इसके उत्तर में द्रोण ने कहा—"राजन, तुमने युद्ध करने का जब विचार किया, उसी वक्त आकर मुझसे क्यों नहीं मिले? इसके लिए तुमको मुझे शाप देना चाहिए था, फिर भी तुम इस रूप में आये हो, इसलिए मैं प्रसन्न हूँ। तुम युद्ध करो,

विजयी होगे। मैंने कौरवों का नमक खाया है, इसलिए उनके वास्ते युद्ध करना मेरे लिए अनिवार्य है।"

"आप कौरवों के पक्ष में ही युद्ध कीजिए। मुझे सिर्फ़ विजय की कामनावाले आपके आशीर्वाद चाहिए।" युधिष्ठिर ने कहा।

"कृष्ण जब तुम्हारे हित चिंतक हैं, तब तुम्हारी विजय में संदेह ही क्यों? तुम ज़रूर विजयी होगे।" द्रोण ने कहा।

"आपको पराजित करना किसी के लिए भी संभव नहीं है। ऐसे आपको हम कैसे हरा सकते हैं? यह बताइए?" युधिष्ठिर ने द्रोण से पूछा।

"मैं जब तक युद्ध करता रहूँगा, तब तक तुम्हें विजय न होगी। इसलिए तुम और तुम्हारे भाई मिलकर जल्द ही मुझे मार डालो।" द्रोण ने उत्तर दिया।

"इसीलिए आप से पूछा, आपको मारने का उपाय क्या है?" युधिष्ठिर ने पूछा।

"मेरे हाथ में अस्त्र के रहते मुझे कोई मार नहीं सकता। लेकिन कोई अप्रिय वचन बतावे, यह भी कोई विश्वस्त व्यक्ति के द्वारा मेरे कान में पड़े तो मैं तुरंत अस्त्र त्याग करूँगा।" द्रोण ने उपाय बताया।

इसके बाद युधिष्ठिर कृपाचार्य के पास गया, उसे भी प्रदक्षिणा-प्रमाण करके बोला–

"गुरुवर, मैं आपकी अनुमति लेकर युद्ध करके विजय पाने की अभिलाषा से यहाँ आया हूँ।"

कृपाचार्य भी युधिष्ठिर के वचन सुनकर बड़ा प्रसन्न हुआ। भीष्म तथा द्रोण के कहे अनुसार युद्ध में सहायता के बिना कोई दूसरी सहायता माँगने को कहा। युधिष्ठिर यह पूछने में संकोच करते हुए वहीं खड़ा रहा कि यह कैसे पूछे कि 'आपकी मृत्यु कैसे होगी?' इसे देख कृपाचार्य ने कहा–"मुझे कोई मार नहीं सकता। तुम जाओ और युद्ध करो। मैं तुम्हें आशीर्वाद देता हूँ कि तुम्हारी विजय हो।"

युधिष्ठिर शल्य के पास गया और बोला–"मामा, मुझे युद्ध करने की आज्ञा दीजिए। आपकी अनुमति लेकर मैं शत्रु पर विजय प्राप्त करूँगा।"

शल्य ने भी अपनी अनुमति दी और युधिष्ठिर को आशीर्वाद दिया कि उसकी विजय हो। युद्ध में सहायता के बिना कोई दूसरा वर माँगने को कहा।

इस पर युधिष्ठिर ने कहा–"महाराज, मैं जब युद्ध की तैयारी कर रहा था, तब मैंने आपसे निवेदन किया था कि कर्ण का वध करने में सहायता करे। मैं फिर से यही कामना आपसे करता हूँ।"

"युधिष्ठिर! मैं जरूर सहायता करूँगा। मैं शपथ करता हूँ कि तुम्हें युद्ध में विजय ज़रूर प्राप्त होगी। जाकर युद्ध करो।" शल्य ने कहा। तब युधिष्ठिर अपने छोटे भाइयों के साथ कौरव-सेना से चला गया। इसी वक़्त कृष्ण ने कर्ण के पास जाकर समझाया–"कर्ण, जब तक भीष्म युद्ध के मैदान में रहेंगे तब तक तुम पांडवों के पक्ष में क्यों युद्ध नहीं करते? भीष्म के गिर जाने पर तुम कौरवों के पक्ष में युद्ध कर सकते हो?"

"मैं दुर्योधन के वास्ते अपने प्राण देने को तैयार हूँ। लेकिन मैं कभी उसका अपकार नहीं करूँगा।" कर्ण ने कहा।

कौरव सेना से निकल कर बाहर आने के बाद युधिष्ठिर दोनों सेनाओं के बीच खड़े हो कौरव सेना की ओर देख बोला–"तुम में से कोई हमारी सहायता करना चाहते हो तो मेरे पक्ष में आ जाओ।"

तब धृतराष्ट्र के पुत्रों में से एक युयुत्सु जो युधिष्ठिर के प्रति स्नेह भाव रखता था, आगे आकर बोला–"तुम चाहते हो तो मैं तुम्हारे पक्ष में आकर कौरवों से युद्ध करूँगा।" युधिष्ठिर ने बड़ी प्रसन्नता के साथ मान लिया। तब उसने अपने स्थान को लौट कर कवच धारण किया। सब लोग अपने-अपने रथों पर सवार हुए। योद्धाओं ने शंखनाद किये। रणभेरियाँ बज उठीं। युद्ध प्रारंभ हो गया।

मित्र-भेद

[२]

करकट के मुँह से बंदर की कहानी सुनकर दमनक ने यों कहा :

"भाई, जो लोग केवल अपने ही स्वार्थ का ख्याल रखते हुए किसी न किसी प्रकार अपने पेट भरते हैं, वे कभी भी ऊपर उठ नहीं सकते; सिर्फ़ पेट भरने मात्र से उत्तम जीवन उपलब्ध नहीं होता। आखिर कौआ भी जो चीज़ अपनी चोंच को लगी, उसे खाकर पेट भर लेता है। जिसका जीवन अपने मित्रों, गुरुजनों, सेवकों तथा विपत्ति में पड़े लोगों के लिए काम नहीं देता, वह जीवन ही क्या है? एक हड्डी मिल जाय तो पेट न भरने पर भी कुत्ता संतुष्ट हो जाता है। पर हाथी की बात ऐसी नहीं; वह स्वाभिमान रखता है! बहुत गिड़गिड़ाने के बाद ही वह कुछ खाता है। सिंह अपने पंजे में आये हुए गीदड़ पर झपटकर उसे नहीं खाता। वह मत्त हाथी पर ही वार करता है। अन्य प्राणियों को मारने में भी प्रकृति का अपना धर्म होता है। ऐसी हालत में जीवन का भी तो अपना धर्म होगा! छोटा गड्ढा शीघ्र भरता है, इसी प्रकार हीन व्यक्ति थोड़ी-सी आमदनी से संतुष्ट हो जाते हैं। पर सभ्यता को प्राप्त किये हुए हम अपने कर्तव्य का तिरस्कार किये बिना, पशु-प्रवृत्ति से संतुष्ट होने पर भी, मानव मानव-पशु के रूप में ही रह जाते हैं, मगर उनमें और जानवरों में अंतर ही क्या है?"

"मगर इसमें हमारे कर्तव्य का प्रश्न कहाँ उठता है? हम सिंह के अधीन तो काम नहीं करते हैं न?" करटक ने पूछा।

"पगले, पद और नौकरियाँ आज रहेंगी, कल छूट जायेंगी, पर कर्तव्य तो

अंतिम पृष्ठ का चित्र

हमेशा रहता ही है। योग्य व्यक्तियों के लिए पद के मौक़े सदा बने रहते हैं, अयोग्य व्यक्ति ही शीघ्र अपने पद खो बैठते हैं। हमारी योग्यताओं के अनुरूप ही हमारे कार्य-कलापों के लिए आदर और अनादर प्राप्त होते हैं। विशाल पत्थर को पहाड़ पर पहुँचाना बड़ा कठिन है, पर नीचे गिराना आसान है। इसी प्रकार आदर और प्रतिष्ठा प्राप्त करना कठिन कार्य है। केवल पेट भरनेवाले मूर्ख बने रहने के लिए किसी प्रकार का श्रम करने की आवश्यकता नहीं।" दमनक ने समझाया।

"अच्छी बात है! यह बताओ, आखिर तुम्हारा क्या उद्देश्य है? हमारे शासक सिंह से तुम क्या पूछना चाहते हो?" करटक ने प्रश्न किया।

"मुझे लगता है कि हमारे शासक किसी बात को देख या सुनकर डरे हुए से लगते हैं। उनके भय को देख उनके सेवक अन्य जानवर भी डर गये हैं। हमारे शासक को कुछ करते सूझता नहीं लगता है।" दमनक ने अपना संदेह प्रकट किया।

"सिंह के पास जाकर यह कहना खतरे से खाली नहीं है कि तुम डर गये हो। इसलिए तुम इस झमेले में मत पड़ो।" करटक ने सलाह दी।

"जो साहसी हैं, उन्हें खतरे का डर नहीं होता। राजा के लिए जो हित की बात होती है, उसे कहना तो प्रत्येक नागरिक का कर्तव्य होता है। अलावा इसके जो लोग राज़ा की प्रशंसा प्राप्त करना चाहते हैं, उन्हें राजा के साथ मेल-जोल बढ़ाना होगा।" दमनक ने समझाया।

"अच्छी बात है! पर सावधान रहो! हम दोनों की क़िस्मत तुम्हारी विजय पर निर्भर है।" करटक ने जवाब दिया। इस पर दमनक अपने बड़े भाई को प्रणाम करके पिंगलक के पास पहुँचा।

पिंगलक ने दमनक को देख अपने अनुचरों से कहा—"उसे मेरे पास आने

दो। वह मेरे पुराने सेवक का पुत्र है!" दमनक पिंगलक के पास आया, उसे नमस्कार करके बैठ गया।

"तुम कुशल हो न? आज तक तुम मुझे दिखाई नहीं दिये? तुम्हारे आने का कारण क्या है?" पिंगलक ने पूछा।

"आप भले ही न बुलावे, पर आपकी सेवा में पहुँचना मेरा कर्तव्य है। मुझ जैसे क्षुद्र व्यक्ति के द्वारा भी आप का प्रयोजन होता है। हम कई पीढ़ियों से आपकी सेवा करते आ रहे हैं, इसलिए आपके सुख और दुख के समय भी आप का साथ देना हमारा धर्म है। आपने पूछा-"मुझे देखने आज तक क्यों नहीं आये?" क्या आपने मुझे अपने मंत्रि-मंडल में स्थान दिया? क्या मंत्रणा के लिए बुलाया? सेवकों में कौन योग्य हैं और कौन अयोग्य हैं, यह बात मालिक जब तक समझ नहीं पाते हैं, तब तक वे दूर ही रह जाते हैं। वास्तव में सेवकों का स्वभाव अपने मालिक के द्वारा उन्हें काम में लाने की रीति के अनुकूल भी होता है। घोड़ा, पुस्तक, तलवार, औरत, वाद्य और वचन का मूल्य इन्हें काम में लानेवाले व्यक्तियों पर निर्भर करता है!" दमनक ने कहा।

"लोमड़ी, तुम आखिर कहना क्या चाहते हो?" पिंगलक ने पूछा।

"मैं लोमड़ी हूँ, यह मानकर आप मुझे छोटा न समझिये! उत्तम जाति का रेशम भी कीड़ों से मिलता है। पत्थर में से सोना निकलता है। लकड़ी में से आग पैदा होती है! इसलिए जन्म धारण में बड़ी बात नहीं, गुण प्रधान होता है! इसलिए आप मुझे नीचा मत मानिये! मैं विश्वास पात्र हूँ।" दमनक ने कहा।

"क्या मैं तुम्हारे बारे में नहीं जानता? आज तुम्हारे आगमन का कारण क्या है?" पिंगलक ने पूछा। "मैं आपसे एक ख़ास बात बताना चाहता हूँ। आप पानी पीने नदी के पास गये और बिना पिये तुरंत क्यों लौट आये?" दमनक पूछा।

पिंगलक ने सोचा कि अपने भय की बात इसके सामने प्रकट करना उचित नहीं है, इसलिए बोला–"इसका कोई खास कारण नहीं है, मुझे पानी पीने की इच्छा नहीं हुई, इसलिए नहीं पिया।"

"ऐसी बात हो जो मेरे सामने प्रकट नहीं की जा सकती हो तो छोड़ दीजिए। सब बातें सब के सामने कही भी नहीं जा सकतीं।" दमनक ने जवाब दिया।

दमनक की कुशाग्र बुद्धि पर पिंगलक का विश्वास जम गया और बोला–"हमारे जंगल में एक भयंकर जानवर आया है। उसकी रंभाहट भयानक है। इसलिए मैं इस जंगल को छोड़ना चाहता हूँ।"

"क्या महाराज ध्वनि को सुनकर ही डर गये? आपके पुरखों ने बड़े ही श्रम के साथ जंगल का यह जो राज्य कमाया, इसे छोड़ देना न्याय संगत है? बिजली के गिरने की ध्वनि को सुनते हैं, तूफ़ान की आवाज़ सुनते हैं, लेकिन ये ध्वनियाँ हमारी कोई हानि नहीं करतीं। आप उस रंभाहट की परवाह न कीजिए। क्या आपने रणदुंदुभी की कहानी नहीं सुनी?" दमनक ने पूछा।

"वह क्या है?" पिंगलक ने पूछा।

दमनक ने यों बताया! एक भूखा लोमड़ी आहार की खोज में युद्ध भूमि में पहुँचा। वहाँ पर उसे एक भयंकर ध्वनि सुनायी दी। लोमड़ी डर गया, आखिर उसने देखा कि एक पेड़ की डाल में रणदुंदुभी बंधी हुई है। हवा के कारण हिलकर शाखाएँ उसे मार रही थीं जिससे ध्वनि निकलती थी। लोमड़ी ने सोचा कि उसमें माँस भरा होगा। उसे एक ओर काटा, उसमें छेद बनाया, मगर उस दुंदुभी में चमड़े के सिवाय लोमड़ी को कुछ नहीं दिखायी दिया।

दमनक ने पिंगलक को यह कहानी सुनाकर कहा–"इसलिए ध्वनियों के आधार पर कुछ निर्णय नहीं किया जा सकता।"

१४०. ईसा का जन्म-स्थान

बेत्लेहेम (जोर्डान) में स्थित इस गिरजा घर में ईसा मसीह् के जन्म का स्थान है। क़िले जैसे लगनेवाला यह गिरजा घर प्राचीन ईसाई-शिल्प का परिचय देता है। शताब्दियाँ बीत जाने पर भी इस में कोई परिवर्तन नहीं हुआ है।

Photo by Subhash Varma
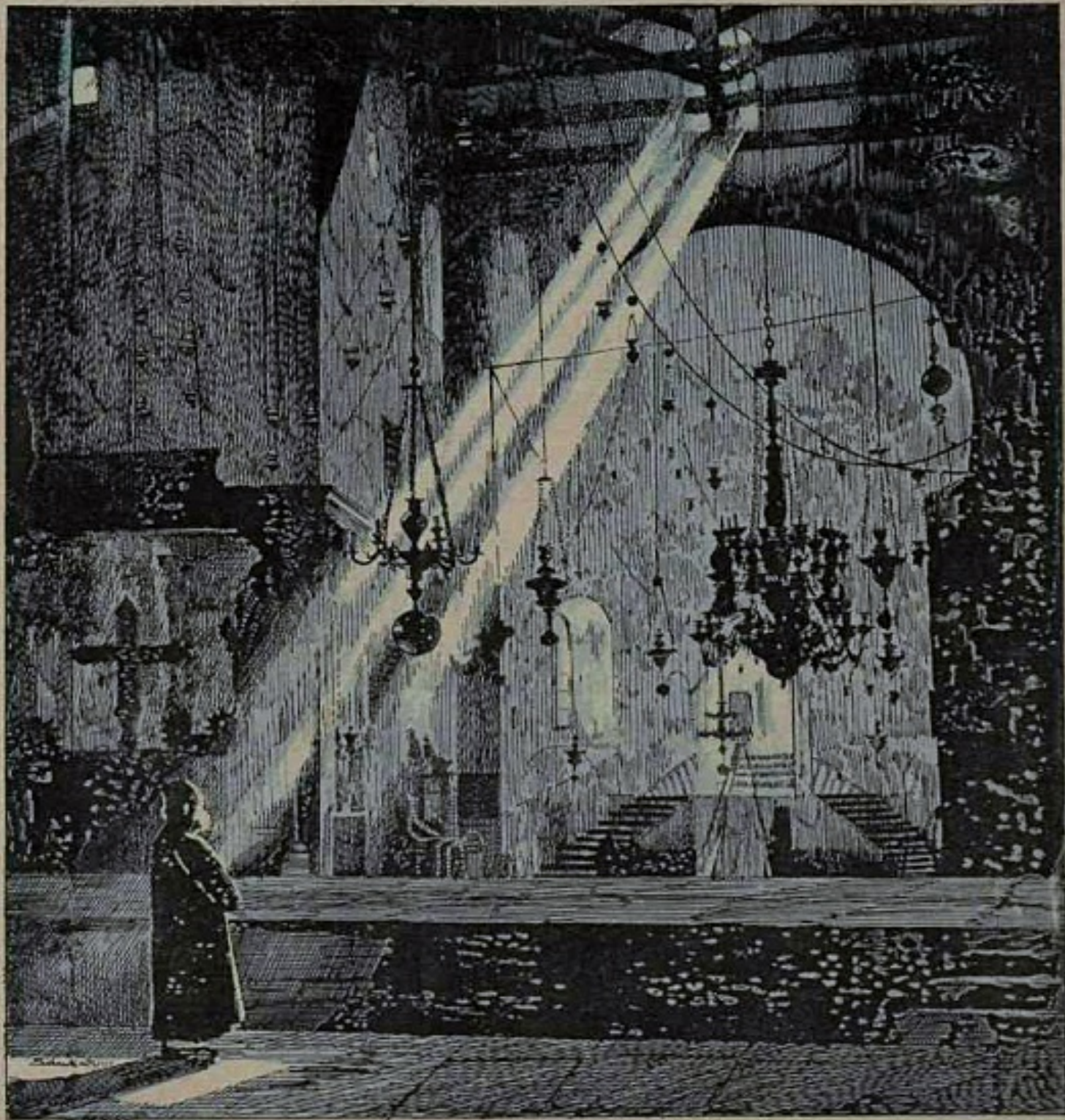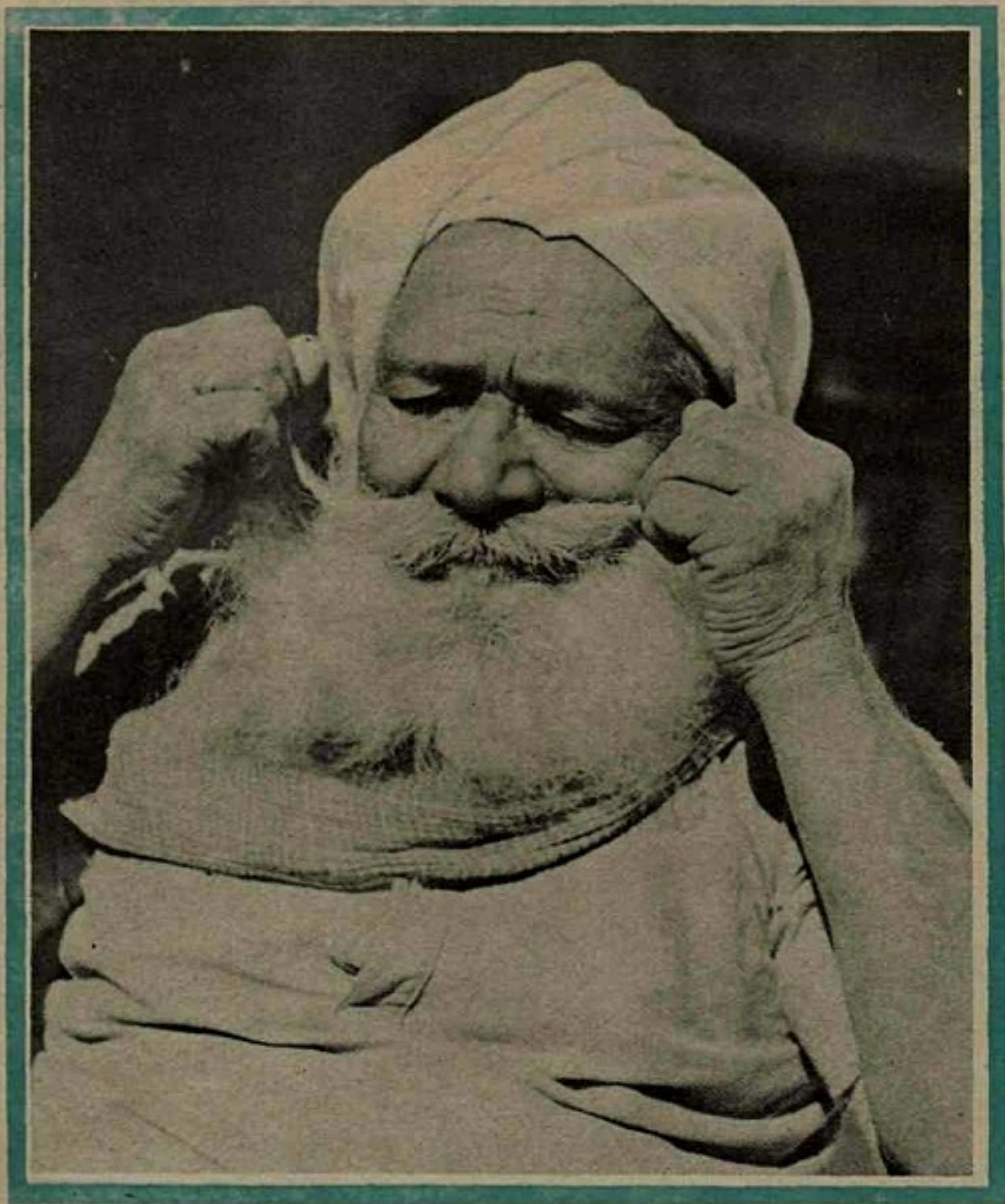
पुरस्कृत परिचयोक्ति

मूँछें मुझको प्राण समान !

प्रेषक : निर्मल मिश्रा

Photo by R. P. Ram

निर्मल मिश्रा, नं. १४११,
बाजार सीताराम, देहली-७

मैं दाढ़ी से बड़ा परेशान !

पुरस्कृत
परिचयोक्ति

फोटो-परिचयोक्ति-प्रतियोगिता :: पुरस्कार २०)

★

★ परिचयोक्तियाँ सितम्बर ५ तक प्राप्त होनी चाहिए।

★ परिचयोक्तियाँ दो-तीन शब्द की हों और परस्पर संबंधित हों, पुरस्कृत परिचयोक्तियाँ नवम्बर के अंक में प्रकाशित की जायंगी!

चन्दामामा

इस अंक की कथा-कहानियाँ-हास्य-व्यंग्य

दूसरा मुखपृष्ठ:
जंघीस खाँ

तीसरा मुखपृष्ठ:
छत्रपति शिवाजी

Printed by B. V. REDDI at The Prasad Process Private Ltd., and Published by B. VISWANATHA REDDI for Chandamama Publications, 2 & 3, Arcot Road, Madras-26. Controlling Editor: 'CHAKRAPANI'

चन्दामामा के ग्राहकों को सूचना

यदि आप अपना पता बदल रहे हों, तो पांचवीं तारीख से पहिले ही अपनी ग्राहक-संख्या के साथ, अपना नया पता सूचित कीजिये। यदि विलम्ब किया गया, तो अगले मास तक हम नये पते पर 'चन्दामामा' न भेज सकेंगे।

आपके सहयोग की आशा है।

डाल्टन एजन्सीस, मद्रास - २६

वार्षिक शुल्क के लिए सम्पर्क करें : डौल्टन एजेंसीज़, चन्दामामा बिल्डिंग मद्रास-२६
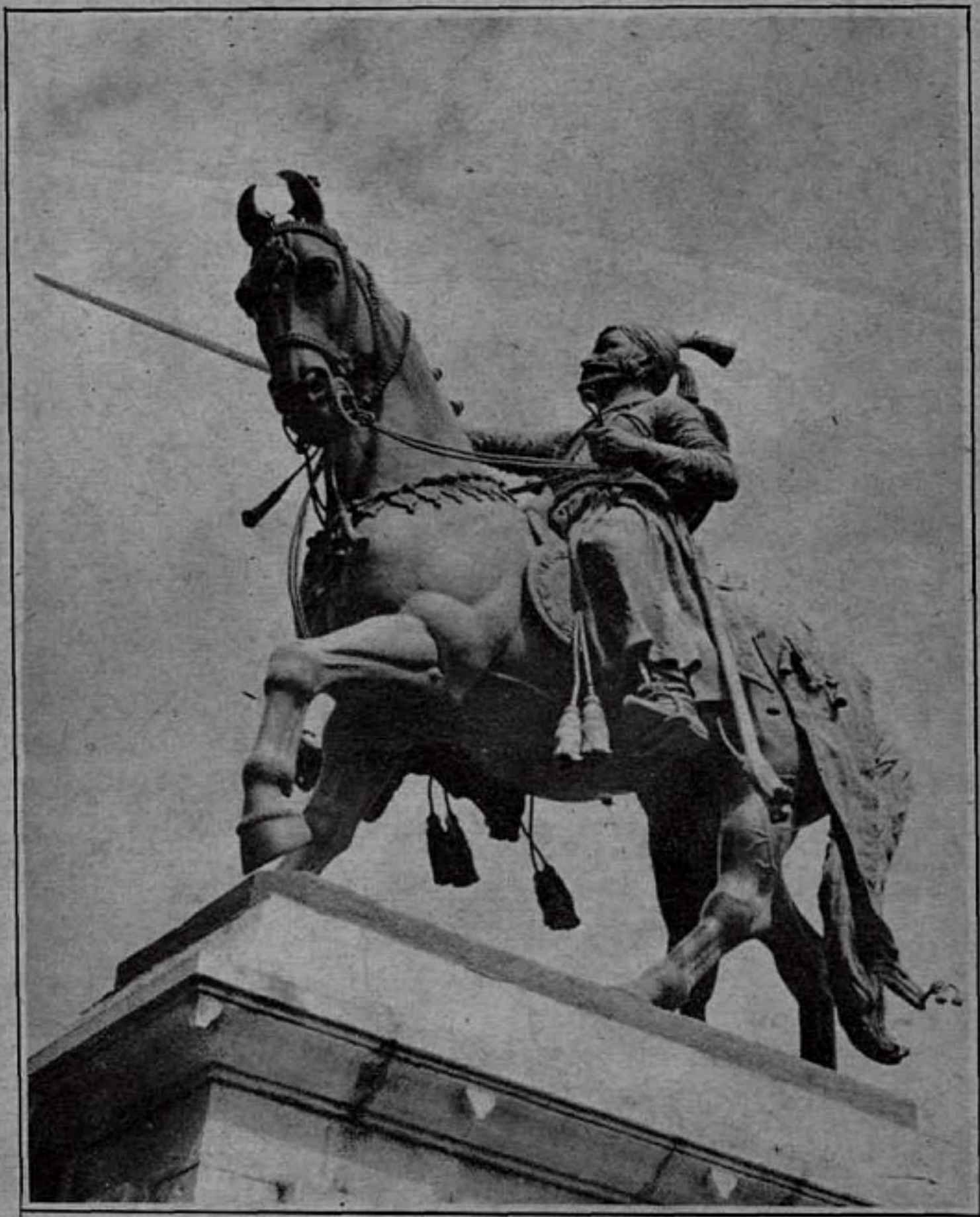
Photo by: SHANTARAM R. SHINDE